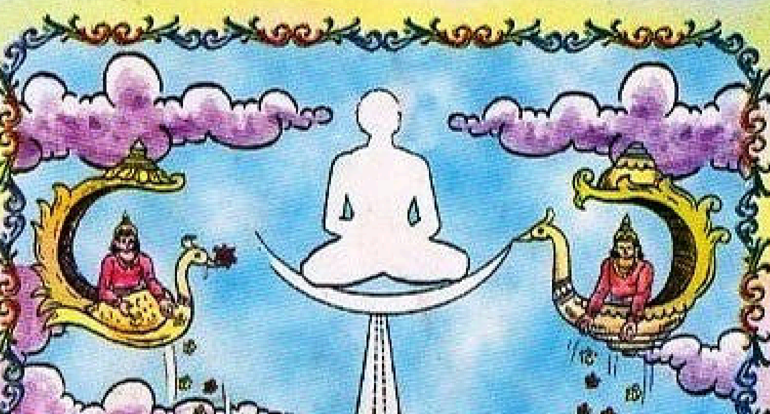

श्री दशलक्षण धर्म की पूर्णता अर्थात् सिद्धपद की प्राप्ति

मुद्रक: जैन कम्प्यूटर्स, 9829776754 फैक्स:0141-2709865

श्री दशलक्षण धर्म विधान

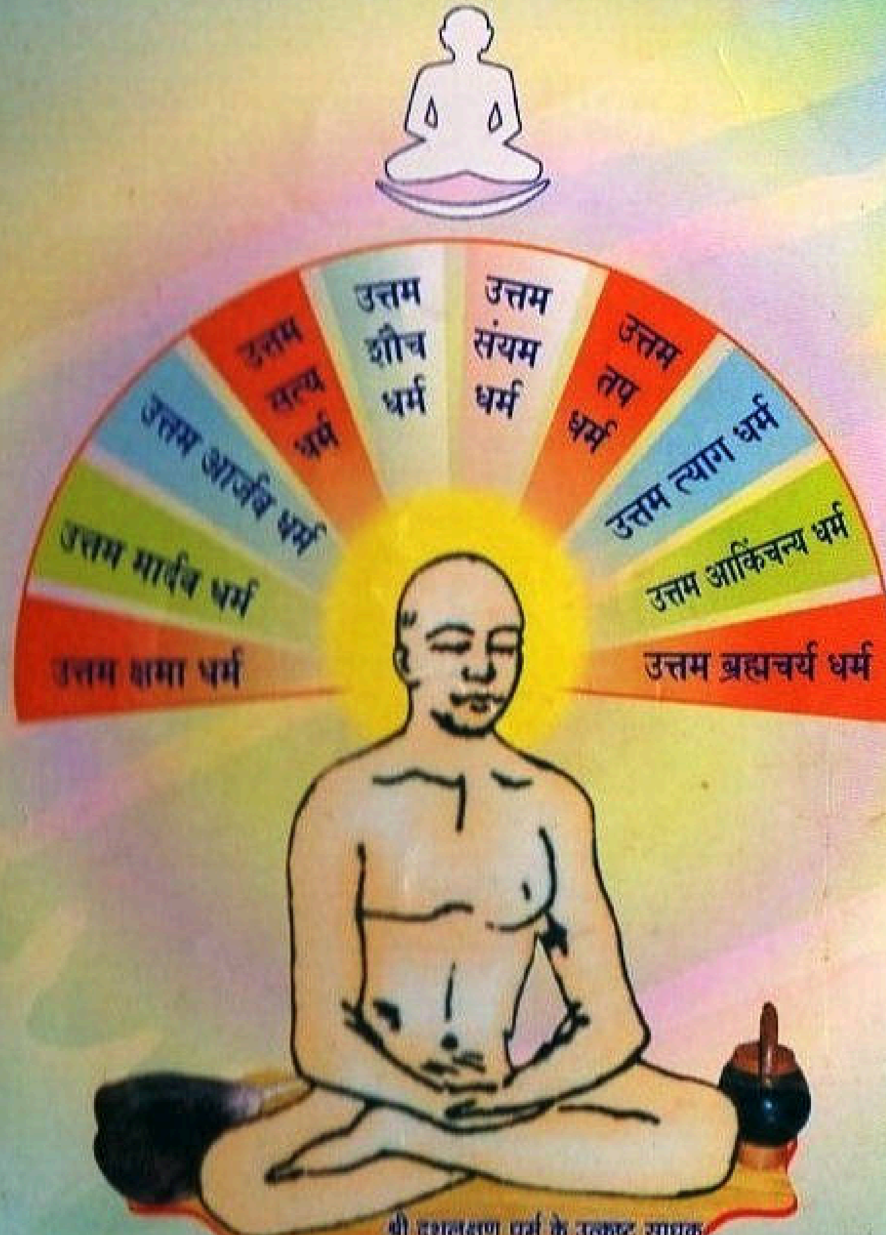

श्री दशलक्षण धर्म के उत्कृष्ट साधक

रचयिता- कविवर पण्डित राजमल पवैया, भोपाल

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

श्री दशलक्षण धर्म विधान

:: रचयिता ::

कविवर पण्डित राजमलजी पवैया, भोपाल

:: प्रकाशक ::

कु. रेशु जैन
आत्मजा श्री बिमलकुमार जैन
नीरु केमीकल्स, विवेक विहार, दिल्ली

एवं

आत्मार्थी ट्रस्ट (रजि.)

आत्मसाधना केन्द्र

रोहतक रोड, घेवरा मोड़, नई दिल्ली-110 041

सप्तम पुष्प

प्रथम संस्करण : 2000 प्रतियाँ
दशलक्षण महापर्व के पावन अवसर पर
(दिनांक - 08.08.2005)

मूल्य 12/-

प्रकाशकीय

आत्महित के निमित्तभूत एवं पर्वराज पर्यूषण पर करणीय श्री दशलक्षण **धर्म विधान** को प्रकाशित करते हुए आत्मार्थी ट्रस्ट, दिल्ली अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव कर रहा है।

आत्मार्थी ट्रस्ट, दिल्ली आध्यात्मिकसत्पुरुष गुरुदेव श्रीकानजीस्वामी द्वारा प्रचारित तत्त्वज्ञान को जनसाधारण के समीप तक पहुँचाने हेतु कृत संकल्पित है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु सैद्धान्तिक व आध्यात्मिक ग्रंथों के साथ-साथ ही विधान-पूजन-भक्ति आदि के प्रकाशन को भी हमारी साहित्यिक गतिविधियों में सम्मिलित किया गया है। इसी श्रृंखला में यह कृति आपके समक्ष प्रस्तुत है।

इस विधान के रचयिता कविवर पण्डित राजमलजी पवैया, भोपाल के हम अत्यन्त आभारी हैं, जिनके कारण यह पुष्प एवं अध्यात्म से ओत-प्रोत अन्य शताधिक विधान समाज को प्राप्त हुए हैं। प्रस्तुत विधान की प्रकाशन व्यवस्था में पण्डित बाबूलालजी बांझल, गुना का विशेष सहयोग रहा है। अत: हम उनके हृदय से आभारी हैं। जैन कम्प्यूटर्स, जयपुर ने भी समयावधि में सुन्दर एवं आकर्षण मुद्रण करने के साथ-साथ ही स्वरुचि पूर्वक प्रूफ संशोधन का कार्य सम्पादित किया है। एतदर्थ धन्यवाद !

जिनेन्द्रदेव द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रवचन, विधान, आध्यात्मिक व सैद्धान्तिक ग्रन्थों के द्वारा होता रहे – इसी भावना के साथ आत्मार्थी ट्रस्ट, दिल्ली प्रकाशन समिति यह सप्तम पुष्प आपश्री के सम्मुख समर्पित करते हुए प्रसन्नता का अनुभव कर रही है।

ट्रस्टीगण

बिमलकुमार जैन, अजितप्रसाद जैन, आदीश जैन, पृथ्वीचन्द जैन, नरेश जैन लुहाड़िया, कुसुम जैन

मुद्रण : जैन कम्प्यूटर्स, जयपुर Mob. : 098297-76754
Ph. : 0141-2700751 Fax : 0141-2709865

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

श्री दशलक्षण धर्म विधान

ॐ

मंगलाचरण

(छंद-अनुष्टुप)

मंगलम् सिद्ध परमेष्ठी मंगलम् तीर्थंकरम्।
मंगलम् शुद्ध चैतन्यं आत्मधर्मोस्तु मंगलम्॥

(दोहा)

जयति पंचपरमेष्ठी जिनप्रतिमा जिनधाम।
जय जगदम्बे दिव्यध्वनि श्रीजिनधर्म प्रणाम॥

(छंद-चामर)

वीतराग श्री जिनेन्द्र ज्ञान रूप मंगलम्।
गणधरादि सर्व साधु ध्यानरूप मंगलम्॥
वस्तु का स्वभाव ही अनाद्यनंत मंगलम्।
जैनधर्म विश्वधर्म सर्वधर्म मंगलम्॥
क्षमा मार्दव आर्जव सत्य मंगलम्।
शौच सत्य संयम तप त्याग श्रेष्ठ मंगलम्॥
धर्म आकिंचन्य ब्रह्मचर्य मंगलम्।
धर्म दश धारणीय सर्वश्रेष्ठ मंगलम्॥
मुक्ति सोपान दश यही भव्य मंगलम्।
भावमयी नवविधान परम दिव्य मंगलम्॥

(दोहा)

दशलक्षण ध्रुव धर्म की, पूजन करूँ महान।
पार करूँ सोपान दश, पाऊँ पद निर्वाण॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि॥

पूजन क्रमांक १

समुच्चय पूजन

स्थापना

(छंद-गीतिका)

धर्म दशलक्षण परम महिमामयी का ज्ञान लूँ।
धार इनको हृदय में शुद्धात्मा को जान लूँ॥
धर्म उत्तम क्षमा पावन क्रोध का करता विनाश।
धर्म उत्तम मार्दव निज विनय का करता प्रकाश॥
धर्म उत्तम आर्जव ऋजुतामयी सुखकार है।
धर्म उत्तम सत्य श्रेष्ठ असत्य नाशनहार है॥
धर्म उत्तम शौच तृष्णा लोभ हर्ता है महान।
धर्म उत्तम परम संयम मुक्ति सुखदाता प्रधान॥
धर्म उत्तम तप अनिच्छुक भाव करता है प्रदान।
धर्म उत्तम त्याग शोभा आत्मा की है महान॥
धर्म उत्तम पूर्ण आकिंचन परम सुखरूप है।
ब्रह्मचर्य स्वधर्म उत्तम शील सिन्धु अनूप है॥
यही हैं दश धर्म उत्तम करूँ मैं पूजन सदा।
मार्ग भव का छोड़ कर शिवमार्ग पाऊँ सौख्यदा॥

(छंद-सोरठा)

क्षमा आदि दश धर्म, निज आत्मा के धर्म हैं।
इनसे जो विपरीत, वे सब भव के कर्म हैं॥
आत्म धर्म की प्राप्ति, होती है सम्यक्त्व से।
करूँ विधान महान, सम्यक् दर्शन प्राप्ति हित॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव सत्य शौच संयम तप त्याग आकिंचन्य ब्रह्मचर्य दशधर्म अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(वीरछंद)

समभावी निर्मल जल पाकर करूँ आत्मा का अभिषेक।
जन्म जरा मरणादि रोग हर गुण अनंत पाऊँ प्रत्येक॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

समभावी निज चंदन लाऊँ तिलक लगाऊँ भली प्रकार।
भवज्वर नाशूँ ताप विनाशूँ शीतल शिवसुख मिले अपार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

समभावी अक्षत गुण पाऊँ करूँ आत्मा का उद्धार।
अक्षय पद की प्राप्ति करूँ प्रभु ध्रुव सुख पाऊँ अपरंपार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

समभावी निज शील पुष्प ला करूँ आत्मा का श्रृंगार।
कामबाण विध्वंस करूँ मैं महाशील गुण लूँ उरधार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

समभाावी नैवेद्य चढ़ाऊँ परम तृप्ति पाऊँ अविकार।
क्षुधा रोग विध्वंस करूँ पद निराहार पाऊँ इस बार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

समभावी निज दीप उजारूँ पाऊँ उर में ज्ञान अपार।
दर्शनमोह चरित्रमोह हर केवलरवि पाऊँ शिवकार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

समभावी निज ध्यान धूप ले आत्मधर्म का लूँ आधार।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ मैं हो जाऊँ स्वामी निर्भार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो विभाव परिणति विनाशनाय धूपं नि.।

समभावी तरु के फल लाऊँ महामोक्ष फल के दातार।
भाव-द्रव्यसंयममय मुनि बन पाऊँ सुख ध्रुवधाम अपार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

समभावी गुण अर्घ्य बनाऊँ हो जाऊँ भव सागर पार।
पद अनर्घ्य अविनश्वर पाऊँ सादि अनंत सौख्य दातार॥
उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों का पालन कर भली प्रकार।
चढूँ मोक्ष के सोपानों पर पाऊँ मुक्ति भवन का द्वार॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

(वीरछंद की विशेष धुन)

समकित के घिर आए बदरा, तत्त्वज्ञान की चली बयार।
भेदज्ञान की दामिनि दमकी, अनुभव रस की झरी फुहार॥
तप्त हृदय चंदनसम शीतल, क्षीण क्षणिक में राग विकार।
शुद्धातम की अक्षत महिमा, की छायी है अजब बहार॥

परम विवेक मयूर कूजता, नाचत गावत शुद्ध मल्हार।
पुण्य-पाप शुभ-अशुभ आस्रव, के सब बंद हो गए द्वार॥
संवर नाचे छम छम छम छम, हुई निर्जरा अब साकार।
शिव सरि उमड़-उमड़ लहरायी, बहा ले गई राग विकार॥
रत्नत्रय की बजी बांसुरी, चेतन हो भव सागर पार।
मोक्षमहल की सुख शैय्या पर, मुक्ति वधू की लो मनुहार॥

(दोहा)

महाअर्घ्य अर्पण करूँ श्री दश धर्म महान।
एकमात्र ध्रुवधाम निज का श्रृंगार प्रधान॥

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो महाअर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(छंद-चौपाई)

उत्तम दश लक्षण उर धारूँ। कर्म दोष सब ही निरवारूँ॥
अब इनकी जयमाला गाऊँ। इन्हें धार उर शिवसुख लाऊँ॥

(वीरछंद)

एकदेश श्रावक जन पालन करते हैं दशलक्षण धर्म।
सर्वदेश मुनि पालन करते हो जाते हैं वे निष्कर्म॥
केवल आत्मचिन्तवन करते विषयों की अभिलाषा त्याग।
निरारंभ मुनिवर होते हैं तिल तुष तक से कभी न राग॥
आत्मध्यान में रत रहते हैं परमतपस्वी श्री मुनिराज।
ये दश उत्तम धर्म पाल कर पा लेते हैं निज पदराज॥
पहिले सम्यक् दर्शन लेते फिर व्रत धारण करते हैं।
माया मोह विनाश शीघ्र ही निज अनुभव रस भरते हैं॥
स्वपर विवेक बिना सम्यक्दर्शन का होता कभी न नाम।
सम्यक् दर्शन बिना न मिलता मुनि को भी सच्चा विश्राम॥
बिन समकित के जप तप व्रत सब कर्म बंध के ही कारण।
समकित हो तो जप तप व्रत संयम सब ही भवदधि तारण॥

जैसे अगर इकाई हो तो शून्य सभी होते बलवान।
बिना इकाई शून्य शून्य है सभी जानते हैं गुणवान॥
उसी भांति समकित बिन सारा श्रम है शून्य समान सदा।
भव सागर दुख का कारण ही होता है यह सदा सदा॥
पहिले दशलक्षण व्रत का अभ्यास करके हम रुचिपूर्वक।
जब सम्यक् दर्शन हो जाए तब व्रत धारें विधि पूर्वक॥
यही धर्म है श्रेष्ठ लोक में यही मोक्ष के दस सोपान।
इन पर क्रम-क्रम से चढ़ने पर प्राणी पा लेते निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्मेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

(रोला)

दशलक्षण विधान की पूजन उर को भायी।
अब तो काललब्धि भी देखो मेरी आयी॥
दशधर्मों का पालन करूँ सदा ही स्वामी।
आत्मध्यान कर शिवसुख पाऊँ अन्तर्यामी॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्मेभ्यो नमः।

क्षमा और शांति में सुखी रहै सदैव जीव,
क्रोध में न एक पल रहै सुख चैन से।
आवत ही क्रोध अङ्ग अङ्ग से पसेव गिरै,
होठ डसै, दाँत घिसै, आग झरै नैन से॥
औरन को मारै, आपनो शरीर कूट डारै,
नाक भौं चढ़ाय कुराफात बकै बैन से।
ज्ञान-ध्यान भूल जात, आपा-पर करै घात,
ऐसे रिपु क्रोध को भगावो क्षमा सैन से॥

पूजन क्रमांक २

श्री उत्तम क्षमा धर्म पूजन

स्थापना

(रोला)

उत्तम क्षमा महान भाव, सहित पूजन करूँ।
क्रोध कषाय विनष्ट करूँ स्वयं की शक्ति से॥
निर्मल सहज स्वभाव प्राप्त करूँ मैं हे प्रभो।
क्रोध न हो उत्पन्न ऐसा ही श्रम नित करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-मानव)

प्रभु उत्तम शान्ति प्रदाता जल लाऊँ क्षीरोदधि सम।
अभिषेक रचा निज होऊँ त्रय रोग नाश में सक्षम॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

प्रभु उत्तम क्षमा धर्म का शीतल चंदन उर लाऊँ।
भव ताप निवारण करके आनंद अतीन्द्रिय पाऊँ॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

प्रभु उत्तम क्षमा धर्म के अनियारे अक्षत लाऊँ।
निज अक्षय पद पाने को निज शुद्धात्मा ही ध्याऊँ॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

प्रभु उत्तम क्षमा धर्म के नव कुसुम शीलमय लाऊँ।
कामाग्नि नाश करने को अपना स्वरूप ही ध्याऊँ॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।
प्रभु उत्तम क्षमा धर्म के नैवेद्य भावमय लाऊँ।
परिपूर्ण तृप्ति पाने को अपना स्वभाव ही ध्याऊँ॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
प्रभु उत्तम क्षमा धर्म के दीपक उर में उजियारूँ।
मोहान्धकार के क्षय हित मिथ्यात्व तिमिर निरवारूँ॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
प्रभु उत्तम क्षमा धर्म की निज ध्यान धूप उर लाऊँ।
आठों ही कर्म विनाशूँ परिपूर्ण ध्रौव्य सुख पाऊँ॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय विभाव परिणति विनाशनाय धूपं नि.।
प्रभु उत्तम क्षमा धर्म का फल पाऊँ महा मोक्षमय।
संसार भाव क्षय करके पाऊँ निर्वाण सौख्यमय॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय महामोक्षफल प्राप्ताय फलं नि.।
प्रभु उत्तम क्षमा धर्म के गुण अर्घ्य बनाऊँ अनुपम।
पदवी अनर्घ्य पाने में हो जाऊँ स्वामी सक्षम॥
यह उत्तम क्षमा धर्म ही है क्रोध कषाय निवारक।
सबसे पहिले इसको ही धारण करना आवश्यक॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(वीरछंद)

घोर अशुभ से पाप प्रकृतियों का करता है प्राणी बंध।
थावर नामक कर्म बंधता है उदय समय होता दुख द्वंद्व॥
पृथ्वीकायिक जीवों की रक्षा का भाव जगे उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर पाऊँ निज सुख सर्वोत्तम॥१॥
ॐ ह्रीं श्री पृथ्वीकायिकपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
एकेन्द्रिय जलकायिक प्राणी पापोदय में दुख पाते।
महामोह मिथ्यात्व ग्रसित हो कभी न पलभर सुख पाते॥
जलकायिक जीवों की रक्षा का भाव जगे उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर पाऊँ निज सुख सर्वोत्तम॥२॥
ॐ ह्रीं श्री जलकायिकपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
अग्निकाय एकेन्द्रिय प्राणी बहु दुख से जलते रहते।
महापाप से पीड़ित होकर भवदधि में बहते रहते॥
अग्निकाय जीवों की रक्षा का भाव जगे उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर पाऊँ निज सुख सर्वोत्तम॥३॥
ॐ ह्रीं श्री अग्निकायिकपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
पवनकाय के जीव पाप के कारण बहु संकट पाते।
ये भी एकेन्द्रिय प्राणी हैं अघ का घट भरते जाते॥
वायुकाय जीवों की रक्षा का भाव जगे उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर पाऊँ निज सुख सर्वोत्तम॥४॥
ॐ ह्रीं श्री वायुकायिकपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
हरित वनस्पतिकायिक प्राणी एकेन्द्रिय बहु दुख पाते।
छेदन भेदन कष्ट प्राप्त कर पाप उदय मरते जाते॥
हरित वनस्पति के जीवों की रक्षा करना है उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर पाऊँ निज सुख सर्वोत्तम॥५॥
ॐ ह्रीं श्री वनस्पतिकायिकपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

पापोदय से थावर प्राणी पांच भेद के होते हैं।
दो हैं भेद सूक्ष्म अरु बादर जो पाँचों में होते हैं॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सूक्ष्मस्थूलपंचस्थावरपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

दो इन्द्रिय लट इल्ली शंख गिंडोला जोंक व कौड़ी जीव।
करुणा का सागर उर जागे रक्षा इनकी करूँ सदीव॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥७॥

ॐ ह्रीं श्री द्वीन्द्रियजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

बिच्छू कुन्था चिन्टी खटमल पई घुन सब तेइन्द्रिय जीव।
करुणा का सागर उर जागे इनकी रक्षा करूँ सदीव॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥८॥

ॐ ह्रीं श्री त्रीन्द्रियजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

मकड़ी मच्छर मक्खी भंवरा बर्र आदि चतुरेन्द्रिय जीव।
करुणा का सागर उर जागे इनकी रक्षा करूँ सदीव॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥९॥

ॐ ह्रीं श्री चतुरिन्द्रियजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

मन बिन पाँचों इन्द्रिय धारी सकल असैनी प्राणी जीव।
करुणा का सागर उर जागे इनकी रक्षा करूँ सदीव॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री असंज्ञीपंचेन्द्रियजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

पापोदय से जीव नारकी ऊष्ण शीत बहु दुख पाते।
करुणा का सागर उर में पर क्या हम रक्षा कर पाते॥

इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥११॥

ॐ ह्रीं श्री नारकीजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

पापोदय से जीव असंख्यों पशुगति पाते दुखदायी।
छेदन भेदन भार वहन की पीड़ा ही सदैव पायी॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री तिर्यंचगतिजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

क्रोध मान माया लोभादिक वश में मनुज महा दुखिया।
राग-द्वेष-मोह के कारण कभी न हो पाया सुखिया॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मनुष्यजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

चऊ निकाय के देवों में जा जीव नहीं सुख पाता है।
मरण समय यह झूर-झूर कर रोता है बिल्लाता है॥
इन सबका दुख जान दया का भाव धरूँ उर में उत्तम।
उत्तम क्षमा धर्म धारण कर शिव सुख पाऊँ सर्वोत्तम॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विधदेवजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

सारे ही थावर त्रस प्राणी कर्मों के वश भ्रमते हैं।
चारों गति का भ्रमण बढ़ाते कभी न निज में जमते हैं॥
करुणा का सागर लहराता श्री मुनियों के हृदय महान।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ करूँ आत्मा का कल्याण॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री त्रसस्थावर-समस्तजीवपरिरक्षणरूपोत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

उत्तम क्षमा महान ही परमोत्तम निज धर्म।
क्रोध रहित यदि हो हृदय क्षय हो सर्व अधर्म॥

(छंद-ताटंक)

वस्तु स्वयं की सदा स्वयं में मिलती आत्मध्यान द्वारा।
श्री गुरुकृपा आत्म-अनुभव से मिलती शुद्ध ज्ञान धारा॥
तत्त्वों के अभ्यासपूर्वक करो यथार्थ तत्त्वनिर्णय।
फिर संकल्प-विकल्प तोड़कर निजस्वभाव का लो आश्रय॥
अब जोड़ो उपयोग आत्मा के स्वरूप से ले निज बल।
शुद्ध स्वानुभव निर्विकल्प हो साधक बन जाओ निर्मल॥
पहिले की अशुद्धता जो अब टल कर हुई शुद्ध पर्याय।
अन्तर्मुख होना ही शुद्ध स्वभाव प्राप्ति का एक उपाय॥
शुद्ध स्वानुभव में आनंद अतीन्द्रिय का आता है स्वाद।
शुद्ध स्वानुभव में विकल्प का अणु भर रहता नहीं विवाद॥
हृदय कमल में सुस्थित ज्ञानानंद स्वभावी शुद्धात्मा।
द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित होता है चेतन परमात्मा॥
सम्यक्दृष्टि जीव की होती सिद्ध वधू से पावन लग्न।
सुख समृद्ध रूपी ज्ञानामृत सागर में हो जाता मग्न॥
उत्तम क्षमा धर्म का पावन फल पाता है ध्रुव निर्वाण।
दश धर्मों का पालन करके हो जाता है वह भगवान॥

(दोहा)

पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ विनय सहित भगवान।
बाह्यान्तर प्रगटित करूँ उत्तम क्षमा महान॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(दोहा)

हो प्रभु मेरे हृदय में क्षमा धर्म का भान।
निश्चय से पालन करूँ पाऊँ पद निर्वाण॥

इत्याशीर्वाद:

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ३

श्री उत्तम मार्दव धर्म पूजन

स्थापना

(कुण्डलिया)

उत्तम मार्दव धर्म ही विनय समुद्र महान।
विनय स्वगुण को प्राप्त कर करूँ आत्मकल्याण॥
करूँ आत्मकल्याण भावना निर्मल भाऊँ।
समकित लेकर सम्यक् ज्ञान हृदय प्रगटाऊँ॥
दृढ़ सम्यक् चारित्र धार सुख पाऊँ अनुपम।
मोक्ष प्राप्त करने में प्रभु हो जाऊँ सक्षम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-ताटंक)

शुद्ध भाव जल पाने को प्रभु ज्ञान भाव उर में लाऊँ।
त्रिविध रोग सर्वथा नष्ट कर आत्मज्ञान वैभव पाऊँ॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

शुद्धभाव चंदन पाने निज शीतलता का ज्ञान करूँ।
चिर संसार ताप हरने को निज स्वरूप का भान करूँ॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्धभाव के गुणमय अक्षत विनय भाव से मिलते हैं।
अक्षयपद पाते ही उर के कमल स्वत: ही खिलते हैं॥

उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

शुद्धभाव के पुष्प अनूठे कामबाण पीड़ा हरते।
लाख चौरासी उत्तर गुण दे परमसौख्य उर में भरते॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

शुद्धभाव के सुचरु रसमयी अनुभव से निर्मित होते।
अनाहार पद के पाते ही प्राणी पूर्ण तृप्त होते॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

शुद्धभाव के दीप ज्योतिमय का है विनय भाव आधार।
मोह तिमिर मिथ्यात्व नष्ट कर अंतर्मन करता अविकार॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

शुद्धभाव की धूप ध्यानमय अष्टकर्म क्षय करती है।
विनय भाव की पावन गंगा निज अंतर में भरती है॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय विभाव परिणति विनाशनाय धूपं नि.।

शुद्धभाव तरु फल पाने का जो निश्चय कर लेता है।
महा मोक्षफल वह पाता है सकल व्याधि हर लेता है॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

शुद्धभाव का अर्घ्य बनाऊँ निश्चय विनय हृदय लाऊँ।
पद अनर्घ्य पाऊँ हे स्वामी शुद्ध आतमा ही ध्याऊँ॥
उत्तम मार्दव धर्म प्राप्त करने को विनय भाव लाऊँ।
परम शुद्ध चैतन्य तत्त्व का निर्णय कर शिवसुख पाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-चांद्रायण)

वीतराग सर्वज्ञ देव अरहंत हैं। अष्टादश दोषों से रहित महंत हैं॥
मानरहित हो विनयसहित वंदन करूँ। मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥१॥
ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

वीतराग जिनवर की वाणी धर्म है। जो इसके विपरीत वही तो कर्म है॥
मान रहित हो धर्मशुद्ध वंदन करूँ। मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥२॥
ॐ ह्रीं श्री जिनपदधर्मनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

अष्टकर्म हर सिद्धस्वपद पाया महान। गुणअनंत के धारी हैं जग में प्रधान॥
मान रहित हो सिद्धों को वंदन करूँ। मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥३॥
ॐ ह्रीं श्री सिद्धपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

श्री संघनायक आचार्य महान हैं। परम तपस्वी गुण छत्तीस प्रधान हैं॥
विनयसहित आचार्यों को वंदन करूँ। मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥४॥
ॐ ह्रीं श्री आचार्यपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

ग्यारह अंग पूर्व चौदह का श्रेष्ठज्ञान।
उपाध्याय मुनि शिक्षक गुण पच्चीस जान॥
मान त्याग श्री उपाध्याय वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥५॥
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

अट्ठाईस मूलगुण पति मुनिवर महान।
समिति गुप्ति व्रत पालक वनवासी प्रधान॥
सकल मान तज मुनियों को वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥६॥
ॐ ह्रीं श्री साधुपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जिनवर जन्मादिक तप क्षेत्र प्रधान हैं।
धर्म प्रभावक अतिशय क्षेत्र महान हैं॥
मान त्याग इन क्षेत्रों को वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री अतिशयक्षेत्रपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जहाँ जहाँ हैं अकृत्रिम जिनबिम्ब सब।
शुद्ध आतमा के हैं ये प्रतिबिंब सब॥
मान त्याग इन बिंबों को वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री अकृत्रिमजिनचैत्यपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

ऊर्ध्वलोक के सर्वबिंब जिन सुखजनक।
प्रथम स्वर्ग से लेकर पंचोत्तर तलक॥
मान त्यागकर सर्व चैत्य वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधीजिनचैत्यनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

मध्यलोक में ज्योतिष लोक प्रसिद्ध जिन।
तेरह द्वीपों में भीं बिंब स्व-सिद्ध जिन॥
मध्य लोक के विनय सहित वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधी जिनचैत्यपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

अधोलोक जिन भवनवासि के जानिए।
व्यंतर के भी बिंब असंख्यों मानिए॥
अधोलोक के मान त्याग वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधी जिनचैत्यपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

ढाईद्वीप के तीर्थक्षेत्र सब जानिए।
सिद्धक्षेत्र निर्वाणक्षेत्र सब मानिए॥
मान त्याग सब सिद्धक्षेत्र वंदन करूँ।
मार्दव धर्म धार उर भवबंधन हरूँ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धक्षेत्रपदनमन मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-विधाता)

श्रेष्ठ जिनमार्ग को पाकर मोक्ष में हम भी जायेंगे।
भेदविज्ञान उर लाकर पूर्ण समकित भी पायेंगे॥
प्रथम मिथ्यात्व को हर लें मोह संपूर्ण क्षय कर लें।
राग का राग जय करके विरागी पद सजायेंगे॥
पंच अणुव्रत भी धारेंगे बनेंगे व्रती श्रावक हम।
महाव्रत पंच धारण कर पूर्ण संयम भी पायेंगे॥
ज्ञान अपना करेंगे हम ध्यान अपना करेंगे हम।
परम वैराग्य धारण कर स्वयं को हम भी ध्यायेंगे॥
मिलेगा शुद्ध रत्नत्रय यथाख्याती बनेंगे हम।
घातिया नाश कर सर्वज्ञ पद निज हम भी पायेंगे॥
करेंगे योग सारे क्षय करेंगे क्षय अघाति भी।
सिद्ध पद पायेंगे अपना मोक्ष के सौख्य पायेंगे॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

विनय भाव ही मूल मार्दव धर्म महान का।
नाशूँ सारी भूल विनय शुद्ध उर में धरूँ॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ४

श्री उत्तम आर्जव धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-कुण्डलिया)

ऋजुता लाऊँ हृदय में मायाचारी छोड़।
उत्तम आर्जव धर्म से अब लूँ नाता जोड़॥
अब लूँ नाता जोड़ स्वयं से निज को ध्याऊँ।
करूँ आत्म उद्धार स्वयं की महिमा पाऊँ॥
अन्तर्मन को निर्विकार कर पाऊँ समता।
परम मोक्ष सुख पाने को उर धारूँ ऋजुता॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-गीतिका)

साम्यभावी शुद्ध जल ही परम शुचिमय सुखमयी।
त्रिविध रोग विनाश करता पूर्णतः है भवजयी॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

साम्यभावी सहज चंदन नहीं पाया आज तक।
भवातप ज्वर भी न क्षय हो सका है प्रभु आज तक॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

साम्यभावी शुद्ध अक्षत हैं अनंतों गुणमयी।
स्वपद अक्षय आत्म-अनुभवमयी है भवदुखजयी॥

धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

साम्यभावी शुद्ध पुष्प महान लाना है मुझे।
शीलगुण की महामहिमा शीघ्र पाना है मुझे॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

साम्यभावी शुद्ध रसमय ज्ञान चरु अनुभवमयी।
क्षुधारोग विनष्ट करते तृप्ति देते शिवमयी॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

साम्यभावी शुद्ध दीपक ज्योति निज जगमग मिले।
मोहतम का नाश हो प्रभु ज्ञान केवल उर झिले॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

साम्यभावी शुद्ध उत्तम धूप पावन ध्यानमय।
अष्टकर्म विनाश करती सौख्यप्रद निर्वाणमय॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय विभाव परिणति विनाशनाय धूपं नि.।

साम्यभावी भावना के फल महान प्रसिद्ध हैं।
मोक्षफल देते सदा को अरु बनाते सिद्ध हैं॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

साम्यभावी शुद्ध अर्घ्य अपूर्व लाऊँ सजा कर।
पद अनर्घ्य महान पाऊँ ज्ञान वीणा बजा कर॥
धर्म उत्तम आर्जव ही परम श्रेष्ठ महान है।
छल कपट माया रहित है सौख्य हेतु प्रधान है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-चौपाई)

दोष अठारह रहित महंत। छयालीस गुण पति अरहंत॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१॥

ॐ ह्रीं श्री छियालीस गुणसहित जिनचरणनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जीवनमुक्त श्री अरहंत। कुटिल भाव मैं तजूँ तुरंत।
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मुक्तजीवअरहन्तपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

अष्टकर्म हर हुए प्रसिद्ध। त्रिलोकाग्र पर राजे सिद्ध॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

पैंतालीस लाख योजन। विस्तृत सिद्धशिला पावन।
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धशिलास्थितमुक्तात्मपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

धारक गुण छत्तीस विराट। श्री आचार्य संघ सम्राट॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥५॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

श्री आचार्य स्वगुण भंडार। पालन करते पंचाचार॥
सहज परोक्ष करूँ वंदन। आर्जव भाव धरूँ पावन॥६॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपदपरोक्षनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

उपाध्याय के गुण पच्चीस। ग्यारह अंग पूर्व मिल ईश।
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥७॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

मुनियों के शिक्षक ऋषिराज। उपाध्याय श्री हैं मुनिराज॥
करूँ परोक्ष सहज वंदन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥८॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपदपरोक्षनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

अट्ठाईस मूलगुण धार। मुनिव्रत धार हुए अविकार।
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥९॥

ॐ ह्रीं श्री साधुपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

समिति महाव्रत आवश्यक। पंचेन्द्रिय वश गुण नायक॥
सरल परोक्ष करूँ वंदन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुनिपरोक्षपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

दिव्यध्वनि माँ जिनवाणी। स्वपर प्रकाशक कल्याणी॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥११॥

ॐ ह्रीं श्री जिनवाणीनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जन्म आदि चार कल्याण। ये ही अतिशय क्षेत्र महान।
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री अतिशयक्षेत्रनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जिस थल से मुनि होते सिद्ध। सिद्ध क्षेत्र वे जगत प्रसिद्ध॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धक्षेत्रपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

अकृत्रिम जिनबिम्ब महान। प्रातिहार्य वसु शोभावान॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अकृत्रिमजिनचैत्यपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जग में जो कृत्रिम जिनबिंब। उनमें निरखूँ निज प्रतिबिंब॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री कृत्रिमजिनचैत्यपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

इत्यादिक जिन क्षेत्र अनेक। पूज्य जान वन्दूँ प्रत्येक॥
सरल भाव से करूँ नमन। आर्जव धर्म धरूँ पावन॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सकलपूज्यस्थानकपदनमनार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-ताटंक)

शुद्धभाव परिणमन न हो तो फिर व्यवहार नहीं कारण।
निश्चय बिन व्यवहार न होता शिवपथ में पलभर साधन॥
आत्मज्ञान से रह सुदूर जो मुनि पद धारण करता है।
केवल ग्रीवक तक जाता है आत्मीय सुख हरता है॥
निर्मल आत्म भावना के बिन सम्यक् दर्शन कभी नहीं।
निरतिचार व्रत भी पालन हो तो भी शिवपथ कभी नहीं॥
इसीलिए सम्यग्दर्शन का उद्यम करना श्रेष्ठ प्रधान।
इसके बिन अज्ञान दशा का होता कभी नहीं अवसान॥
जो अनादि अज्ञान नाशकर शुद्ध ज्ञान का पाता अंश।
वही जीव पुरुषार्थ शक्ति से करता कर्मों को निर्वंश॥
शुद्ध भाव ही उपादेय है पूर्ण हेय है आस्रव भाव।
आस्रव भाव नाश कर निरखो आर्जवधर्मी शुद्ध स्वभाव॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

आर्जव धर्म महान मैंने पूजा भाव से।
पाऊँ ऋजुता पूर्ण जुड़कर आत्मस्वभाव से॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ५

श्री उत्तम सत्य धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-कुण्डलिया)

निश्चय सत्य स्वरूप ही मोक्षमार्ग का मूल।
क्षय असत्य होता सहज क्षय होती भव भूल॥
क्षय होती भव भूल जीव उर सत्य सजाता।
ज्ञानभाव का आश्रय ले सत्पथ पर आता॥
शुद्धभाव के द्वारा पाता भवदुख पर जय।
हेय जान व्यवहार छोड़ता पाता निश्चय॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-चौपाई आंचलीबद्ध)

शुद्ध स्वानुभव की जलधार। त्रिविध रोग करती संहार।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

शुद्ध स्वानुभव चंदन शुद्ध। भव ज्वर नाशक परम विशुद्ध।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्ध स्वानुभव अक्षत भाव। अक्षयपद दातार स्वभाव।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।

उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।
शुद्ध स्वानुभव पुष्प महान। करते रामबाण अवसान।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।
शुद्ध स्वानुभव सुचरु प्रधान। क्षुधारोग करते अवसान।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
शुद्ध स्वानुभव दीपक शुद्ध। केवलज्ञान प्रदाता बुद्ध।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
शुद्ध स्वानुभव धूप अनूप। अष्टकर्म नाशक चिद्रूप।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।
शुद्ध स्वानुभव फल सुखदाय। महामोक्ष फल ही शिवदाय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

शुद्ध स्वानुभव के निज अर्घ्य। तत्क्षण देते स्वपद अनर्घ्य।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
उत्तम सत्य धर्म सुखकार। श्री मुनि करते अंगीकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-रोला)

क्रोध सहित हो तो कोई सच बोल न पाता।
झूठ बोल कर पाप कमा खोटी गति जाता॥
क्रोधरहित हो सत्य वचन ही बोलूँ स्वामी।
उत्तम सत्य धर्म उर धारूँ अन्तर्यामी॥१॥
ॐ ह्रीं श्री क्रोधातिचाररहितसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
लोभ हृदय हो तो कोई सच नहीं बोलता।
झूठ बोल कर भव अटवी में सदा डोलता॥
लोभरहित हो सत्य वचन ही बोलूँ स्वामी।
उत्तम सत्य धर्म उर धारूँ अन्तर्यामी॥२॥
ॐ ह्रीं श्री लोभातिचाररहितसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
जो भय ग्रसित जीव होते हैं सच न बोलते।
भय से झूठ बोल कर दुख के मध्य डोलते॥
भयविहीन ही सत्य वचन बोलूँ हे स्वामी।
उत्तम सत्य धर्म उर धारूँ अन्तर्यामी॥३॥
ॐ ह्रीं श्री भयातिचाररहितसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
हास्य दोष हो तो फिर सत्य नहीं होता है।
वचन असत्य बोलता है फिर दुख होता है॥
हास्य रहित ही सत्य वचन बोलूँ हे स्वामी।
उत्तम सत्य धर्म उर धारूँ अन्तर्यामी॥४॥
ॐ ह्रीं श्री हास्यातिचाररहितसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जिन आज्ञा बिन वचन अनेकों ही तो होते।
पूर्वापर जो सत्य नहीं वे असत्य होते॥
ऐसे दोष रहित असत्य से सदा बचें हम।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में सदा रचें हम॥५॥

ॐ ह्रीं श्री जिनाज्ञोल्लंघनातिचाररहितसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

एक वस्तु के नाम अनेक सदा होते हैं।
चोखा चावल भात आदि अन्य होते हैं॥
देश देश का जनपद सत्य सत्य होता है।
उत्तम सत्य धर्म पालन से सुख होता है॥६॥

ॐ ह्रीं श्री जिनपद-सत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

बहुजन जिसको कहें उसे भी सत्य जानिए।
रंक बहुत हैं पर लक्ष्मीपति नाम मानिए॥
संवृत सत्य मान लेना अच्छा होता है।
उत्तम सत्य धर्म पालन से सुख होता है॥७॥

ॐ ह्रीं श्री संवृतसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

नर पशु का आकार चित्र में जो भी होता।
वह नर पशु ही कहलाता वह भी सच होता॥
यह स्थापन सत्य कहा जो सत्य कहाता।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में निज सुख लाता॥८॥

ॐ ह्रीं श्री स्थापनसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जग में जिसका नाम प्रसिद्ध उसे तुम जानो।
उसका वह ही नाम सत्य है यह तुम मानो॥
जो है कथन नाम सत्य यह कहलाता है।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में सुख लाता है॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नामसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कृष्ण श्वेत या लाल पीत जैसा तन होता।
रूपवान वह कहलाता जैसा भी होता॥

जिनवाणी में रूप सत्य यह कहलाता है।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में सुख लाता है॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री रूपसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

छोटी हो या बड़ी वस्तु सापेक्ष कथन है।
यही अपेक्षा कहलाती है सत्य वचन है॥
नाम प्रतीति सत्य आगम में कहलाता है।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में सुख लाता है॥११॥

ॐ ह्रीं श्री अपेक्षासत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जो राजा का पुत्र उसे भी राजा कहते।
नैगमनय से यही सत्य है ज्ञानी कहते॥
यही सत्य व्यवहार सत्य ठीक कहलाता।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में शिव सुख लाता॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री व्यवहारसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

शक्ति इन्द्र में बहुत लोक उलटा सकता है।
लोक अनादिनिधन कैसे उलटा सकता है॥
शक्ति अपेक्षा यह संभावना सत्य कहाता।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में शिव सुख लाता॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सम्भावनासत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जीव अनादि अनंत दृष्टि से स्वर्ग न दिखता।
पाँच अमूर्तिक द्रव्य नरक भी कहीं न दिखता॥
नयनों से ओझल पर भाव सत्य कहलाता।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में शिव सुख लाता॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री भावसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

रूपवान सुन्दर नर रूपचंद्र कहलाता।
दानी मनुज जगत में कल्पद्रुम कहलाता॥
ये ही उपमा सत्य जगत में सत्य कहाता।
उत्तम सत्य धर्म ही उर में शिव सुख लाता॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री उपमासत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

और अनेकों बहुत भेद हैं सत्य कथन के।
जिनवाणी में आए हैं जिनराज वचन के॥
मन वच काया शुद्धिपूर्वक इनको जानो।
उत्तम सत्य धर्म अंगीकृत कर सुख आनो॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सत्यधर्माङ्गाय महार्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-सोरठा)

निश्चय सत्य स्वरूप वस्तु स्वभाव महान है।
परम सत्य उर धार निज कल्याण करूँ प्रभो॥

(छंद-मत्त सवैया)

जो सदाचार से शोभित हैं वे स्वयं आत्मरक्षा करते।
वे नहीं कभी भी लौकिक सुख की वांछाएँ उर में धरते॥
निज स्वानुभूति करते पावन वे भेदज्ञान पाते विशाल।
सम्यक् दर्शन के पाते ही मिथ्यात्व तिमिर पूरा हरते॥
शिव पथ पर स्वयं चरण धरते संयम की आभा वे पाते।
निज अनुभव कर निज अंतर में आत्मीय भक्ति उर में भरते॥
सम्यक्त्वाचरण परम पावन उर में ले समभावी होते।
निज धर्मध्यान फिर शुक्लध्यान एकाग्रचित्त होकर करते॥
ले यथाख्यात घातिया नाश कैवल्यज्ञान वे पा लेते।
फिर कर्मों की सब प्रकृति नाश निज सिद्ध स्वपद हर्षित वरते॥
यह निश्चय सत्याचरण शुद्ध ध्रुवधाम तलक पहुँचाता है।
जो उत्तम सत्य धर्म धरते वह शाश्वत शिवसुख उर भरते॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

तीन भुवन में श्रेष्ठ सत्य धर्म ही पूज्य है।
ये ही आदरणीय अन्तर में धारण करूँ॥

इत्याशीर्वाद:

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ६

श्री उत्तम शौच धर्म पूजन

स्थापना

(दोहा)

शौच धर्म ही लोभ का करता है संहार।
संतोषामृत पानकर होता सौख्य अपार॥
जो तृष्णा को जीतते पाते परमानंद।
भव समुद्र को लांघ कर पाते ध्रुव आनंद॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-विधाता)

नीर शुचितामयी लाऊँ जन्म मरणादि दुख हरने।
शरण प्रभु आपकी पाऊँ अशुचिमय भाव जय करने॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

शुद्ध चंदन पूर्ण शुचिमय परम शीतल हृदय लाऊँ।
भवातप नाश करने को निजातम को सदा ध्याऊँ॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्ध अक्षत परम शुचिमय स्वपद अक्षय प्रदाता है।
विभावी भाव नाशक है परम सुख शान्ति दाता है॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

परम शुचिमय पुष्प लाऊँ सुगंधित भावना वाले।
काम के रोग सब नाशूँ सतत अत्यंत दुख वाले॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।
महा शुचिमय सुचरु लाऊँ स्वानुभव प्राप्त करने को।
निराहारी स्वपद पाऊँ सौख्य उर व्याप्त करने को॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
महा शुचिमय ज्ञान घृतमय दीप जोऊँ हृदय भीतर।
मोह विभ्रम मिटाऊँ मैं ज्ञान का प्राप्त हो निर्झर॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
परम शुचिमय धूप लाऊँ ध्यान निज का करूँ स्वामी।
कर्म आठों विनाशूँ मैं बनूँ त्रैलोक्य में नामी॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।
शुद्ध शुचितामयी रस फल मोक्षफल के प्रदाता हैं।
सकल तृष्णा निवारक हैं विभावी भाव घाता हैं॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।
महा शुचिमय अर्घ्य गुणमय बनाने का यतन कर लूँ।
प्रगट पद हो अनर्घ्य मेरा राग-द्वेषादि सब हर लूँ॥
धर्म उत्तम शौच पालूँ लोभ के भाव मैं जीतूँ।
पुण्य अरु पाप भावों से सदा को नाथ मैं रीतूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-हरिगीत)

स्वर्ग सुख सब है विनश्वर आयु भी है नाशवान।
आयु सागर पल्य की भी सदा ही विद्युत समान॥
अथिर है संसार सारा थिर नहीं कोई कहीं।
धर्म उत्तम शौच सुखमय अन्य कोई भी नहीं॥१॥
ॐ ह्रीं श्री देवसुखवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
चक्रवर्ती पद मिले यह भोग वांछा दुखमयी।
राज्य हो षटखंड का वह भी नहीं है सुखमयी॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥२॥
ॐ ह्रीं श्री चक्रिपदभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
तीन खंड महान के पति नहीं नारायण सुखी।
देव सेवक चतुर्विध सेना मगर फिर भी दुखी॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥३॥
ॐ ह्रीं श्री नारायणपदभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
मोक्षगामी कामदेव महान सबका मन हरें।
देव दल भी शुभ उदय से आन कर सेवा करें॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥४॥
ॐ ह्रीं श्री कामदेवपदभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
स्पर्श के हैं भेद आठों विषय की वांछा भरे।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल के अनुसार भाव हृदय करे॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥५॥
ॐ ह्रीं श्री स्पर्शनेन्द्रियभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
भेद रस के पाँच उर में भोग की इच्छा करें।
तृप्त इनसे मन न होता जीव उर दुख ही भरें॥

अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥६॥
ॐ ह्रीं श्री रसनेन्द्रियभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
घ्राण इन्द्रिय गंध के दो भेद हैं वे दुखमयी।
दुर्गंध हो अथवा सुगंध न मुझे पलभर सुखमयी॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥७॥
ॐ ह्रीं श्री घ्राणेन्द्रियभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
चक्षु इन्द्रिय पंचभेद प्रसिद्ध भोगाकांक्षामयी।
स्वर्ग के भी भोग की इच्छा सुरों की दुखमयी॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥८॥
ॐ ह्रीं श्री चक्षुरेन्द्रियभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
कर्ण इन्द्रिय भोग सातों राग के हैं दुखमयी।
गीत हो संगीत हो या वाद्य रंच न सुखमयी॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥९॥
ॐ ह्रीं श्री कर्णेन्द्रियभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
जीव चंचल चित्त में हैं भोग वांछाएँ बहुत।
सदा करता बहुत सेवन फिर भी रहता सुख रहित॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१०॥
ॐ ह्रीं श्री मनवांछितभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
तन अशुभ मल मूत्र से पूरित मढ़ा है चर्म से।
नहीं करता घृणा इससे बँध रहा है कर्म से॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥११॥
ॐ ह्रीं श्री तनसंबंधीभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
रत्न धन घर में बहुत हैं फिर भी धनवांछा बहुत।
दान भी देता है पर सुख शान्ति से पूरा रहित॥

अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१२॥
ॐ ह्रीं श्री धनवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
नारियाँ सुन्दर शची सम आज्ञाकारी महान।
तृप्ति फिर भी नहीं पायी दुखी रहते सदा प्राण॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१३॥
ॐ ह्रीं श्री वनिताभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
बहु सुत आज्ञाकारी हैं अरु कामदेव सम लक्ष्मीवान।
भोग वांछा फिर भी मेरी कम न होती हे भगवान॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१४॥
ॐ ह्रीं श्री पुत्रभोगवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
भ्रात बहु भी विनययुत हैं आज्ञा पालक भी बली।
फिर भी मेरी भोग ज्वाला में सतत आत्मा जली॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१५॥
ॐ ह्रीं श्री भ्रातसुखवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
अन्तरंगी मित्र मुझ से प्रेम करते हैं सदा।
पर न वांछा पूर्ण होती दुखी रहता सर्वदा॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१६॥
ॐ ह्रीं श्री मित्रानुबन्धवांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
मित्र सुत तिय दास दासी भ्रात माता पिता सब।
सकल परिजन सकल वैभव शान्ति सुख देता है कब॥
अथिर यह सब जानकर शुद्धात्म का चिन्तन करूँ।
धर्म उत्तम शौच धारूँ भोग वांछा क्षय करूँ॥१७॥
ॐ ह्रीं श्री सकलपरिजनानुकारित्ववांछाविहीन-शौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-दोहा)

लोभ मूल है पाप का सौख्य मूल है शौच।
जिनके मन में लोभ है उनको सदा अशौच॥

(छंद-मानव)

यह भेदज्ञान का मौसम समकित लेकर आया है।
जिसका जी चाहे ले लो यदि स्वकल्याण भाया है॥
जो मोह नींद में सोते यह उन्हें जगाने आता।
जो जग जाते हैं तत्क्षण उनने ही यह पाया है॥
इसको पाते ही प्राणी सब द्रव्यदृष्टि हो जाते।
जो अज्ञानी होते हैं उनको न रंच भाया है॥
समकित पाते ही प्राणी शिवपथ पर आ जाते हैं।
चारित्र स्वरूपाचरणी उनके उर में छाया है॥
समकित के बिना न होती है सफल साधना अणु भर।
साधना सफल करने को समकित का धन लाया है॥
अविरति प्रमाद क्षय का ही जो जन प्रयत्न करते हैं।
वे ही शुचिता पाते हैं अवसर अपूर्व आया है॥
कर्मों को विनशाते हैं कैवल्यज्ञान पाते हैं।
शिवपुर तक जाने का रथ ज्ञानी ने ही पाया है॥
जाते हैं सिद्धशिला तक शाश्वत ध्रुव सुख पाते हैं।
त्रिभुवन में शौचधर्म यश इन्द्रादिक ने गाया है॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

लोभ विनाशक श्रेष्ठ उत्तम शौच महान है।
पूजन की है आज शुचिता पाऊँ हे प्रभो॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ७

श्री उत्तम संयम धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-रोला)

भाव द्रव्य संयम की शोभा से हो सज्जित।
राग-द्वेष मोहादि भाव से होकर लज्जित॥
करूँ शुद्ध आत्मा से ही प्रभु अपना परिचय।
उत्तम संयम व्रत धारूँ मैं है दृढ़ निश्चय॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-चौपाई)

पूर्ण देश संयम जल धारा। क्षय करती है भव दुखकारा॥
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

पूर्ण देश संयम का चंदन। भव ज्वर नाशक ताप निकंदन।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

पूर्ण देश संयम के अक्षत। दाता है अक्षयपद शाश्वत।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

पूर्णदेश संयम कुसुमांजलि। कामबाण नाशक भावांजलि।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

पूर्ण देश संयम उर लाऊँ। निज अनुभव रस सुचरु बनाऊँ।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

पूर्ण देश संयम ज्योतिर्मय। मोह विनाशक दीप स्वसुखमय।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
पूर्ण देश संयम स्व-ध्यानमय। शुद्ध भाव की धूप धर्ममय।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।
पूर्ण देश संयम फल पाऊँ। महामोक्ष फल ध्रुव प्रगटाऊँ।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसँयमधर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।
पूर्ण देश संयम के पावन। अर्घ्य बनाऊँ मैं मन-भावन।
उत्तम संयम भवदुखहारी। सिद्ध स्वपद दाता सुखकारी॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-सार/जोगीरासा)

भूमि काय की दया पालने के उर भाव जगाऊँ।
कुआ ताल खाई न खुदाऊँ निर्मलता उर लाऊँ॥
पृथ्वीकायिक की रक्षा हो पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१॥
ॐ ह्रीं श्री पृथ्वीकायिकजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
बिन छना जल कभी न वरतूँ छना हुआ वरतूँ जल।
नदी ताल आदिक न बनाऊँ व्यर्थ न ढोलूँ मैं जल॥
जलकायिक की रक्षा हो पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥२॥
ॐ ह्रीं श्री जलकायिकजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
अग्नि कभी भी नहीं जलाऊँ करुणा उर में धारूँ।
नहीं बुझाऊँ अग्नि कभी भी जीव-दया उर धारूँ॥

अग्निकाय की रक्षा हो प्रभु पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥३॥
ॐ ह्रीं श्री अग्निकायिकजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
पंखा आदिक नहीं करूँ मैं जीव दया उर धारूँ।
महा ग्रीष्म हो तो भी स्वामी शीतलता उर धारूँ॥
वायुकाय की रक्षा के हित पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥४॥
ॐ ह्रीं श्री वायुकायिकजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
बाग-बगीचा नहीं लगाऊँ फूल-पात नहिं तोडूँ।
हरितकाय की दया विचारूँ निज से नाता जोडूँ॥
काय वनस्पति रक्षा हो प्रभु पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥५॥
ॐ ह्रीं श्री वनस्पतिकायिकजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
इल्ली जोंक गिंडोला आदिक सबको निजसम जानूँ।
दया-भाव इनके प्रति रखकर दया-धर्म पहिचानूँ॥
दो इन्द्रिय की रक्षा हो प्रभु पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥६॥
ॐ ह्रीं श्री द्वीन्द्रियजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
कुन्थु लीक खटमल चिंटी आदिक की दया विचारूँ।
दयाभाव हो इनके प्रति प्रभु दया धर्म उर धारूँ॥
त्रय इन्द्रिय की रक्षा हो प्रभु पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥७॥
ॐ ह्रीं श्री त्रीन्द्रियजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
मक्खी भौंरा टिड्डी मच्छर जीव सभी हैं जानूँ।
पूर्ण-दया इनके प्रति रक्खूँ सबको प्राणी मानूँ॥
चउ इन्द्रिय की रक्षा हो प्रभु पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥८॥
ॐ ह्रीं श्री चतुरिन्द्रियजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जीव असैनी विविध जगत में जलचर सर्पादिक हैं।
दयाभाव इनके प्रति हो प्रभु ये भी बहुत अधिक हैं॥
रक्षा असैनी पंचेन्द्रिय की पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥९॥

ॐ ह्रीं श्री असंज्ञीपंचेन्द्रियजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

सुर नर नारक पशु संज्ञी सब जीव अनंतों जग में।
इनके प्रति भी दया हृदय हो जाऊँ नहीं भव-मग में॥
संज्ञी जीवों की रक्षा कर पंचेन्द्रिय मन वश कर।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री संज्ञीपंचेन्द्रियजीवरक्षणरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

स्पर्शन इन्द्रिय को जीतूँ विषय भाव निरवारूँ।
शीत ऊष्ण की चाह न जागे निज की ओर निहारूँ॥
काय छहों प्रतिपालक होऊँ पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥११॥

ॐ ह्रीं श्री स्पर्शनेन्द्रियविषयवर्जनरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

रसना इन्द्रिय के सुत पांचों के वश होऊँ न स्वामी।
पाँचों अधोगति के कारण तुम जानत अन्तर्यामी॥
रसना इन्द्रिय जीतूँ प्रभुजी पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री रसनेन्द्रियविषयवर्जनरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

घ्राणेन्द्रिय के सुत दो ही हैं महादुष्ट दुखदायी।
इनको जय करने की सुध-बुध जागी है सुखदायी॥
घ्राणेन्द्रिय को पूरा जीतूँ पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री घ्राणेन्द्रियविषयवर्जनरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

नेत्रेन्द्रिय के सुत पाँचों हैं घोर महादुख दाता।
इनके वश में होकर प्राणी रंच नहीं सुख पाता॥

इन्द्रिय चक्षु सदा को जीतूँ पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री चक्षुरिन्द्रियविषयवर्जनरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कर्णेन्द्रिय के वश में होकर वचन शुभाशुभ भाते।
सप्त स्वरों के वाद्य सुहाते जो भव मध्य भ्रमाते॥
कर्णेन्द्रिय को पूरा जीतूँ पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री कर्णेन्द्रियविषयवर्जनरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

बंदर जैसा यह मन चंचल इसकी गति है न्यारी।
तूफानों से तेज दौड़ता देता है दुख भारी॥
मनकपि को वश में करने को पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री मनविषयवर्जनरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

सब जीवों पर समता धारूँ समभावी हो जाऊँ।
तप संयम करने की इच्छा को साकार बनाऊँ॥
आर्त्त-रौद्र भावों के क्षयहित पंचेन्द्रिय मन कर वश।
उत्तम संयम धर्म संवारूँ निज का ध्यान करूँ बस॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री सामायिकरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

यदि प्रमादवश संयम में कुछ दोष लगे तो स्वामी।
प्रायश्चित ले उन्हें निवारूँ सुन लो अन्तर्यामी॥
छेदोपस्थापन संयम हो मुनिपद सार्थक हो प्रभु।
उत्तम संयम धर्म धार कर निज को ही ध्याऊँ प्रभु॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री छेदोपस्थापनारूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

विविध ऋद्धियाँ भी हों तो प्रभु उनको नहीं निहारूँ।
दोष रहित हो गमन करूँ नित आत्म स्वरूप सवारूँ॥
जीवों का रक्षक है यह परिहारविशुद्धि संयम।
उत्तम संयम धर्म धार कर उर नाशूँ सर्व असंयम॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री परिहारविशुद्धिरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

सर्व कषायें क्षय होतीं पर लोभ अल्प रह जाता।
क्षायिक श्रेणी है पर थोड़ा समय शेष रह जाता॥
सूक्ष्मसांपराय संयम भाऊँ भव-भावों से रीतूँ।
उत्तम संयम धर्म धार उर पंचेन्द्रिय मन जीतूँ॥२०॥
ॐ ह्रीं श्री सूक्ष्मसाम्परायरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
यथाख्यात चारित्र सजा कर मोह सर्वथा नाशूँ।
केवलज्ञान लब्धि उर पाऊँ पद सर्वज्ञ प्रकाशूँ॥
यथाख्यात संयम की महिमा निज अंतर में धर लूँ।
उत्तम संयम धर्म धार उर चारों गति दुख हर लूँ॥२१॥
ॐ ह्रीं श्री यथाख्यातरूप संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
इसप्रकार बहु विधि संयम है मुनि बन संयम धारूँ।
सर्वकषाय भाव को जीतूँ भव संकट निरवारूँ॥
मोक्ष प्राप्ति का साक्षात कारण संयम ही मैं धारूँ।
भावलिंग का वैभव पाकर निज को पार उतारूँ॥२२॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-ताटंक)

अन्तरंग बहिरंग आस्रव से निवृत्ति ही संयम है।
सम्यक् दर्शन ज्ञान पूर्वक जो संवर है संयम है॥
सम्यक्दर्शन बिना मोक्ष का होता सच्चा लक्ष्य नहीं।
सम्यक् दर्शन बिना आत्मा हो सकता प्रत्यक्ष नहीं॥
सम्यक् दर्शन बिना आत्मा हो सकता है दक्ष नहीं।
सम्यक् दर्शन की भू पाए बिन व्रत रूपी वृक्ष नहीं॥
समकित बिन चारित्र व्यर्थ है व्यर्थ यम नियम संयम है।
अन्तरंग बहिरंग आस्रव से निवृत्ति ही संयम है॥
संयम के बिन भव का प्राणी हो सकता है मुक्त नहीं।
संयम बिन कैवल्य लक्ष्मी से हो सकता युक्त नहीं॥
संयम के बिन कर्म नाश हों ऐसी कोई युक्ति नहीं।
संयम के बिन पूर्ण शुद्धि हो ऐसी कोई शक्ति नहीं॥

सप्त प्रकृति से रहित जीव को क्षायिक अथवा उपशम है।
अन्तरंग बहिरंग आस्रव से निवृत्ति ही संयम है॥
षट्कायक की रक्षा करना पंचेन्द्रिय मन वश करना।
विषय शत्रु से सावधान हो निज स्वरूप में ही चरना॥
नर्क, स्वर्ग पशुगति में दुर्लभ सो संयम उर में धरना।
नर तन पाकर भी यदि चूके तो भव कूप बीच गिरना॥
बिना आत्मा की प्रतीति के बाकी सभी असंयम है।
अन्तरंग बहिरंग आस्रव से निवृत्ति ही संयम है॥
जब संयम की बजे बांसुरी तभी धन्य यह नरतन है।
जब संयम के घुंघरू छनकें तभी धन्य यह जीवन है॥
जब संयम की जगे रागिनी लगे आत्मा की धुन है।
निज संयम की शहनाई की लय में ज्ञानी तन्मय है॥
दुर्लभ आत्म बोधि पाने का यही एक सच्चा क्रम है।
अन्तरंग बहिरंग आस्रव से निवृत्ति ही संयम है॥
चरितमोह वश लेश न संयम समकित धारी अव्रती।
एकदेश संयम का धारी कहलाता है देशव्रती॥
पूर्णदेश संयम का धारी कहलाता है महाव्रती।
यथाख्यातचारित्र पूर्ण पा होता है सर्वज्ञ यती॥
देव इन्द्र अहमिन्द्र तरसते हमें सुलभ यह हरदम है।
अन्तरंग बहिरंग आस्रव से निवृत्ति ही संयम है॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

संयम धर्म महान जो भी धारे भाव से।
पाएगा निर्वाण जिन प्रभु की कथनी यही॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ८

श्री उत्तम तप धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-कुण्डलिया)

उत्तम तप ही सार है इस संसार मझार।
परम तपस्वी सुमुनि ही पाते भव का पार॥
पाते भव का पार आत्मा को ध्याते हैं।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर ही वे सुख पाते हैं॥
ज्ञान-ध्यान-वैराग्य भावना भाते कर श्रम।
परम मोक्ष सुख पाते हैं वे ही तो उत्तम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-सार/जोगीरासा)

शुद्धभाव तप की शोभा से मैं शोभित हो जाऊँ।
जन्म जरा मरणादि नाश कर पूर्ण सुखी हो जाऊँ॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

शुद्धभाव तप चंदन लाऊँ भव-ज्वर पीर मिटाऊँ।
शीतल शान्त निराकुल बनकर निज की महिमा गाऊँ॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्धभाव के अक्षत लाऊँ अक्षयपद प्रगटाऊँ।
जो बाधक कारण शिवपथ के उनको दूर हटाऊँ॥

उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

शुद्धभाव के पुष्प मनोहर कामबाण दुख नाशक।
महाशील गुण ही उत्तम है पद निष्काम प्रकाशक॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

शुद्धभाव रस सुचरु चढाऊँ पूर्ण तृप्त हो जाऊँ।
अनाहार पद शाश्वत पाऊँ रागरहित सुख पाऊँ॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

शुद्धभाव के ज्ञानदीप ले आत्मस्वभाव जगाऊँ।
महामोह मिथ्यात्व तिमिर को पल में पूर्ण भगाऊँ॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

शुद्धभाव की धूप चढाऊँ शुक्लध्यान के द्वारा।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ मैं काटूँ भवदुख कारा॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।

शुद्धभाव के तरु फल लेकर महामोक्षफल पाऊँ।
भाव-द्रव्य-नोकर्म नाशकर शाश्वत निजपद पाऊँ॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

शुद्धभाव के अर्घ्य चढाऊँ भव भावों को क्षय कर।
पद अनर्घ्य पाऊँ मैं अपना राग-द्वेष को जय कर॥
उत्तम तप धारण कर मैं भी द्वादश तप उर धारूँ।
पूर्ण अनिच्छुक बनकर मैं भी केवलज्ञान उजारूँ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-मानव)

भवसागर तरना है तो द्वादश तप उर में धारो।
ले भावलिंग अंतर में निज तरणी पार उतारो॥
दृढ अपरिग्रही बनो तुम बन पूर्ण अनिच्छुक जिनमुनि।
जब तक न मोक्षसुख पाओ तब तक श्रम करना है मुनि॥
उत्तम तप धर्म श्रेष्ठ है निज का ही आश्रय करना।
द्वादश तप के द्वारा फिर संसार ताप सब हरना॥१॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
जिनगुण सम्पत्ति तप धारो त्रेसठ उपवास करो तुम।
अरु भिन्न-भिन्न तिथियों में अनशन तप हृदय धरो तुम॥
उत्तम तप धर्म मनोहर श्री मुनि धारण करते हैं।
कर्मों के सकल भार को तप द्वारा वे हरते हैं॥२॥
ॐ ह्रीं श्री जिनगुणसम्पत्तितपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
तप कर्मक्षपण उपवास इक शत अड़तालिस जानो।
अरु भिन्न-भिन्न तिथियों में अनशन तप करना मानो॥
उत्तम तप धर्म मनोहर श्री मुनि धारण करते हैं।
कर्मों के सकल भार को तप द्वारा वे हरते हैं॥३॥
ॐ ह्रीं श्री कर्मक्षपणतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
तप सिंह निष्क्रीड़ित इक शत सतहत्तर दिन का होता।
इनमें इक शत पैतालिस उपवास सदा ही होता॥
बाकी बत्तीस दिवस हैं पारणा सुविधि के उत्तम।
यह अनशन तप कहलाता मुनिवर करते हैं बिन श्रम॥४॥
ॐ ह्रीं श्री सिंहनिष्क्रीड़िततपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

सर्वतोभद्र तप इक शत दिन का होता है पावन।
उपवास पचत्तर होते पच्चीस पारणा के दिन॥
इसकी विधि सहज ज्ञानमय जिन-आगम ने बतलाई।
यह अनशन तप कहलाता जो है पवित्र सुखदाई॥५॥
ॐ ह्रीं श्री सर्वतोभद्रतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
तप महासर्वतोभद्र दो सौ पैंतालिस दिन के।
उपवास इक शत छयानवे पारणा उनन्चास दिन के॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥६॥
ॐ ह्रीं श्री महासर्वतोभद्रतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
लघु निष्क्रीड़ित तप अस्सी दिन के महान होते हैं।
पारणा बीस होती हैं उपवास साठ होते हैं॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥७॥
ॐ ह्रीं श्री लघुनिष्क्रीड़िततपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
चौंतीस दिवस का मुक्तावलि तप है बहु सुखकारी।
उपवास पच्चीस पारणा नौ होते हैं दुखहारी॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥८॥
ॐ ह्रीं श्री मुक्तावलितपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
तप कनकावली वर्ष इक उपवास बहत्तर जानो।
प्रति मास करो छह उत्तम निज का स्वरूप पहिचानो॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥९॥
ॐ ह्रीं श्री कनकावलितपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
विधि से तप करो सुदर्शन दिन अड़तालीस प्रमाणो।
चौबीस पारणा चौबीस उपवास श्रेष्ठ हैं जानो॥

जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१०॥
ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

यह तप उत्कृष्ट सुपावन उपवास इक वर्ष जानो।
इसके हैं भेद अनेकों आगम पढ़ कर पहिचानो॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥११॥
ॐ ह्रीं श्री उत्कृष्टतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

आचाम्ल सुतप अतिपावन इक शत-उन्नीस दिनों के।
उपवास बताये इक शत पारणा उन्नीस दिनों के॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अनशन तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१२॥
ॐ ह्रीं श्री आचाम्लतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जितनी हो भूख उदर में उससे कम ही लो भोजन।
तप अवमौदर्य यही है धारण करते हैं मुनिजन॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह दूजा तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१३॥
ॐ ह्रीं श्री अवमौदर्यतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

तप वृत्तिपरिसंख्यान इस विधि से भोजन लेंगे।
विधि नहीं मिली तो इस दिन भोजन हम कभी न लेंगे॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह तीजा तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१४॥
ॐ ह्रीं श्री वृत्तिपरिसंख्यानतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

रसपरित्याग तप सुन्दर जिह्वा इन्द्रिय वश करता।
क्रम-क्रम पाँचों रस तजने वाला मुनि भवदुख हरता॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह चौथा तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१५॥
ॐ ह्रीं श्री रसपरित्यागतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

यह विविक्त शैय्यासन तप उर को बहु सुदृढ़ बनाता।
भू शोध भिन्न आसन कर मुनि तप से बहुसुख पाता॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह पंचम तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१६॥
ॐ ह्रीं श्री विविक्तशैय्यासनतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

तप कायक्लेश अति उत्तम आनंद प्रदाता मानो।
तन को कृश करते मुनिवर होता है खेद न मानो॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह षष्टम तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१७॥
ॐ ह्रीं श्री कायक्लेशतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

दूषण प्रमादवश जो हो श्रीगुरु को बतलाते हैं।
प्रायश्चित्त दंड सुगुरु दे तो पाकर हर्षाते हैं॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह सप्तम तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१८॥
ॐ ह्रीं श्री प्रायश्चित्ततपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जो देव धर्म गुरु थानक विनयित वंदन करते हैं।
अतिशय या सिद्धक्षेत्र प्रति उर विनय भाव धरते हैं॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह अष्टम तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥१९॥
ॐ ह्रीं श्री विनयतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जो मुनि थक जाते अथवा वे रोगी हो जाते हैं।
तप वैय्यावृत्ति पाल मुनि बहु साता पहुँचाते हैं॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह नवमा तप है पावन यह करके भवदुख हरना॥२०॥
ॐ ह्रीं श्री वैय्यावृत्तितपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जिनध्वनि सुन हर्षित होना तप स्वाध्याय नित करना।
आम्नाय पाल कर अपनी अज्ञान सर्वथा हरना॥

जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह दशवाँ तप है पावन यह करके भवदुख हरना ॥२१॥
ॐ ह्रीं श्री स्वाध्यायतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

तन से ममत्व के त्यागी व्युत्सर्ग सुतप के धारी।
निज आत्मा में स्थिर रहते हो जाते मुनि अविकारी॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह तप ग्यारहवाँ पावन यह करके भवदुख हरना ॥२२॥
ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्गतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

मन-वच-काया को थिर कर एकाग्रचित्त होते हैं।
परभाव तज देते हैं तप ध्यानरूप होते हैं॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
यह तप बारहवाँ पावन यह करके भवदुख हरना ॥२३॥
ॐ ह्रीं श्री ध्यानतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

द्वादश तप धारण करके सम्यक् प्रकार से पालो।
तप से कर्मों को क्षय कर निज सिद्ध स्वपद ध्रुव पा लो॥
जिन-आगम में जो विधि है उस ही विधि से तप करना।
ये पावन हैं तप द्वादश इनको कर भवदुख हरना ॥२४॥
ॐ ह्रीं श्री द्वादशउत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-गीत)

ज्ञान की पवन चली पाया भेद ज्ञान।
समकित पाया किया निज श्रद्धान॥
पाया है स्वरूपाचरण पावन पवित्र।
किया क्षय तीनों ही कषाय का वितान॥
संयम की आभा पायी उर में विशाल।
निर्ग्रंथ पद पाया हर्ष है महान॥
हुआ मैं अनिच्छुक सदैव के लिए।
चौबीसों परिग्रह त्यागे तप ले प्रधान॥

छठे सातवें का मिला झूला तत्काल।
धर्मध्यान करके लिया फिर शुक्लध्यान॥
ध्यान द्वारा पाया यथाख्यात चारित्र।
घातिया विनाश पाया मैंने पूर्ण ज्ञान॥
योग क्षीण करते ही पाया सिद्ध पद।
मैंने आज पा ही लिया पद निर्वाण॥
भाव तप मैंने धारा तत्त्व ज्ञान कर।
तप फल निर्जरा का पा लिया विहान॥

(दोहा)

पूर्ण अनिच्छुक तपस्या का फल है निर्वाण।
यही भावना है प्रभो करूँ आत्मकल्याण॥

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

निश्चय तप का भाव उर में जागा हे प्रभो।
परम सुख के हेतु सम्यक् तप ही मैं करूँ॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपधर्माङ्गाय नमः।

कर्म शैल तोड़न को वज्र के समान तप,
मोह अन्धकार के विनाशन को भान है।
मिथ्या घनघोर घटा फारन को मारुत है,
पाप पुञ्ज जारन को अग्नि के समान है॥
प्रोषधादि द्वादश प्रकार बाह्य-अभ्यन्तर,
चित्त वृत्ति रोक करौ होय पूर्ण ज्ञान है।
शैल वन गुफा नदी किनारे ध्यानस्थ होय,
तपश्चरण किये पास आवै निरवान है॥

पूजन क्रमांक ९

श्री उत्तम त्याग धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-कुण्डलिया)

उत्तम त्याग महान ही है भवदुःख हर्त्तार।
ज्ञानभाव की भावना देती सौख्य अपार॥
देती सौख्य अपार ज्ञान कैवल्य प्रदाता।
स्व-पर प्रकाशक ज्ञान सदा को उर में आता॥
जो करते हैं ज्ञान प्राप्ति का सतत परिश्रम।
वे ही पाते त्याग धर्म महिमामय उत्तम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-ताटंक)

क्षीरोदधि से प्रासुक जल ला प्रभु चरणाग्र चढ़ाऊँगा।
जन्म-जरा-मरणादि रोग त्रय हरकर शिवपद पाऊँगा॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

मेरु सुदर्शन पांडुक वन से चंदन लाऊँ अति शीतल।
भवज्वाला संपूर्ण बुझाऊँ हो जाऊँ मैं परमोज्वल॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

विजयमेरु वन भद्रशाल से अक्षत लाऊँ धवलोज्वल।
अक्षयपद पाऊँगा स्वामी पर विभाव सारे ही दल॥

उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

अचलमेरु के नंदनवन से पुष्प मनोहर लाऊँ मैं।
कामबाण विध्वंस करूँ प्रभो शीलस्वभाव सजाऊँ मैं॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

मंदर मेरु सौमनसवन जा सुचरु बनाऊँ अनुभवमय।
क्षुधारोग विध्वंस करूँ प्रभु तृप्त स्वपद पाऊँ गुणमय॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

विद्युन्माली मेरु शाश्वत से मैं रत्नदीप लाऊँ।
मोह तिमिर मिथ्यात्व नष्ट कर निज कैवल्य स्वनिधि पाऊँ॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

नन्दीश्वर से धर्म धूप ला शुक्लध्यान ही ध्याऊँगा।
अष्टकर्म संपूर्ण नष्ट कर शिवपद शाश्वत पाऊँगा॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।

कुण्डलवर ग्यारहवाँ द्वीप मनोहर सुन्दर मनभावन।
फल लाऊँ प्रभु चरण चढ़ाऊँ महामोक्ष पाऊँ पावन॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

द्वीप रुचकवर जाऊँ अर्घ्य बनाऊँ गुणमय ज्ञानमयी।
पद अनर्घ्य पाऊँ हे स्वामी पाऊँ पद निर्वाणजयी॥
उत्तम त्याग धर्म की महिमा ऋषि मुनि गणधर गाते हैं।
जो इसको धारण करते हैं महामोक्षसुख पाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-चौपाई)

कामदेव सम देह मनोहर। पुण्योदय पायी बहु सुन्दर।
इस जड तन से ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥१॥
ॐ ह्रीं श्री तनममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
माता रज से जड़तन पाया। गर्भवास में बहु दुःख पाया।
माता से भी ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥२॥
ॐ ह्रीं श्री जननीममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
पिता वीर्य से जन्मे हो तुम। काल बहुत तक संग रहे तुम।
पिता ममत्व पूर्णतः त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥३॥
ॐ ह्रीं श्री पितृममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
पुण्योदय से शुभ सुत पाया। पापोदय से पुत्र विलाया।
पुत्र ममत्व शीघ्र ही त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥४॥
ॐ ह्रीं श्री पुत्रममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
राज्यपाट भाग्य से पाया। रक्षा में ही समय गंवाया।
राज्यपाट का ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥५॥
ॐ ह्रीं श्री राज्यममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
रत्नस्वर्ण आदिक धन पाया। उत्तम वाहन सुख भी पाया।
धन वाहन का ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥६॥
ॐ ह्रीं श्री धनवाहनादिममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
रंभा जैसी नारी पायी। भोगे भोग बहुत दुखदायी।
स्त्री से ममत्व सब त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥७॥
ॐ ह्रीं श्री स्त्रीममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

परिजन संगी साथी सुत घर। सभी मनोरंजन हैं नश्वर।
गृह कुटुम्ब का ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥८॥
ॐ ह्रीं श्री गृहकुटुम्बममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
चऊ कषाय हैं बहु दुखदायी। इसकारण भव पीड़ा पायी।
चऊ कषाय का ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥९॥
ॐ ह्रीं श्री कषायभावत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
पुत्रादिक से राग-द्वेष बहु। उनके कारण दुख पाये बहु।
राग-द्वेष का ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥१०॥
ॐ ह्रीं श्री राग-द्वेषत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
माता पिता सुत पत्नी आदिक। दुखदाता हैं ये सर्वाधिक॥
सब प्रकार का ममत्व त्यागो। उत्तम त्याग धर्म अनुरागो॥११॥
ॐ ह्रीं श्री समस्तममत्वत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-पंचचामर)

समस्त पर विकल्प त्याग शुद्ध आत्मवान बन।
समस्त रागभाव त्याग चिर-स्वरूपवान बन॥
समस्त मोह जाल छिन्न-भिन्न कर महान बन।
समस्त ज्ञान का समुद्र आत्म-धर्मवान बन॥
स्वरूप में अचल सदा स्वध्यान में प्रवीण हो।
प्रचण्ड शक्ति पुंज तू निजात्म में विलीन हो॥
राग-द्वेष मोह पुण्य-पाप से विहीन हो।
परम अनंत दर्श-ज्ञान-वीर्य-सुख अधीन हो॥
समस्त कर्म शक्तियाँ तुझे डिगा न पाएंगी।
समस्त कार्माण वर्गणा डिगा न पाएंगी॥
समस्त ऋद्धि सिद्धियाँ तुझे लुभा न पाएंगी।
समस्त मंत्र शक्तियाँ तुझे झुला न पाएंगी॥
समस्त शान्ति सौख्य शक्ति का समुद्र तू महान।
तीनों लोक तीनों काल में सदैव है प्रधान॥

तेरे अन्तरंग में है मुक्ति का महा विहान।
तू ही सिद्ध तू ही बुद्ध तू ही ज्ञानपति महान॥

(छंद सोरठा)

उत्तम त्याग महान अंगीकृत कर लो सहज।
यही शान्ति का मूल परम सौख्यदाता सदा॥

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

उत्तम त्याग महान मैंने पूजा हे प्रभो।
धारूँ धर्म स्वरूप स्व-पर विवेक जगा हृदय॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय नमः।

समयसार ही सार है, अन्य सभी निस्सार।
समयसार ध्याये बिना, जीवन को धिक्कार॥
जीवन को धिक्कार, जीव जड़वत् हो जाता।
जड़वत् जब-तक रहे, मोक्ष-मारग नहिं पाता॥
समझो वस्तुस्वरूप सहज ओ मेरे भाई।
इसके समझे बिना व्यर्थ सारी चतुराई॥

X X X

समयसार के ज्ञान बिन, ज्ञान न सम्यक् होय।
भेदज्ञान होता नहीं, लाख करे किम होय॥
लाख करे किय कोय, मोह का कटै न फन्दा।
मिथ्याचारित-ज्ञान, कुगति का गोरखधन्धा॥
कुन्दकुन्द ने कहा, अरे तू ज्ञाता-दृष्टा।
क्यों पामर बन फिरे, सहज तू निज का सृष्टा॥

पूजन क्रमांक १०

श्री उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-कुण्डलिया)

अपरिग्रह का मुकुट है निज आकिंचन धर्म।
जो भी इसको धारते हो जाते निष्कर्म॥
हो जाते निष्कर्म आत्मा को ही ध्याकर।
त्रिलोकाग्र पर जा विराजते शिवसुख पाकर॥
वे ही ध्रुवसुख पाते जो होते हैं निस्पृह।
सच्चे मुनियों को ही भाता है अपरिग्रह॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-विधाता)

चढ़ाऊँ नीर आकिंचन बनूँ मैं निस्पृही स्वामी।
जन्म मरणादि दुख नाशूँ स्वपद पाऊँ परम नामी॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

शुद्ध चंदन चढ़ाऊँ मैं प्राप्त कर धर्म आकिंचन।
भवातप ज्वर विनाशूँ मैं हरूँ भव राग के बंधन॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्ध अक्षत चढ़ाऊँ मैं आकिंचन भावना भाऊँ।
प्राप्त अक्षय स्वपद करके परम शिव सौख्य उपजाऊँ॥

परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।
आकिंचन पुष्प की महिमा काम शर कष्ट हरती है।
शील गुण की प्रदाता है सौख्य जो उर में भरती है॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।
आकिंचन भावमय नैवेद्य मैंने आज पाये हैं।
अनाहारी स्वपद पाने स्वयं के गीत गाये हैं॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।
आकिंचन दीप ज्योतिर्मय मोह भ्रम तम विनाशक हैं।
घातिया कर्म नाशक हैं ज्ञान निज पर प्रकाशक हैं॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।
आकिंचन भाव की निज धूप उर में मोद भरती है।
शुक्लध्यानी बनाती है कर्म वसु घात करती है॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।
आकिंचन भावना के फल मोक्ष फल के प्रदाता हैं।
राग-द्वेषादि भावों के ये ही तो पूर्ण घाता हैं॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

आकिंचनभाव के निज अर्घ्य महिमामय बनाऊँगा।
स्वपद पाऊँ अनर्घ्य अपना ध्यान फल उर सजाऊँगा॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-दिग्पाल)

संसार यह अथिर है ध्रुव है न रंच मानो।
माता पिता त्रिया सुत सब ही अनित्य जानो॥
चक्री के भोग भी तो हैं नाशवान सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१॥
ॐ ह्रीं श्री अनित्यभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
जब आयु पूर्ण हो तो कोई न शरण होता।
यह मंत्र तंत्र औषधि धन आदि व्यर्थ होता॥
कोई न सहायक हैं इंद्रादि देव सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥२॥
ॐ ह्रीं श्री अशरणभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
संसार राग-द्वेषों का मूल है महावन।
कोई भी नहीं सुखिया धनवान हो या निर्धन॥
चारों ही गति में जाकर पाये हैं दुख अपारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥३॥
ॐ ह्रीं श्री संसारभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
जिय जन्मता अकेला मरता भी है अकेला।
अरु पुण्यपाप का फल भी भोगता अकेला॥
कोई न संगी साथी सब एकले विचारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥४॥
ॐ ह्रीं श्री एकत्वभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।
निज आत्मा से सारे ही द्रव्य भिन्न जानो।
अपने से तो अभिन्न यह आत्मा है मानो॥

अन्यत्व भावना यह भाते हैं सुमुनि सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अन्यत्वभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

तन सप्त धातु पूरित अपवित्र है सदा ही।
मल-मूत्र से भरा है यह अशुचि है सदा ही॥
पर शुद्ध बुद्ध चेतन चिद्रूप जीव सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अशुचिभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

शुभ-अशुभ भाव दूषित संसार के हैं प्राणी।
वसु कर्म बंध करते जो होते हैं अज्ञानी॥
आस्रव को नाश करते मुनिराज साधु सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥७॥

ॐ ह्रीं श्री आस्रवभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

आस्रव निरोध संवर शुभ अशुभ भाव नाशक।
जो धारते हैं संवर बनते स्वपर प्रकाशक॥
जो आस्रव से जुड़ते पाते हैं दुख बिचारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥८॥

ॐ ह्रीं श्री संवरभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

सविपाक निर्जरा तो बिलकुल अकाम होती।
अविपाक निर्जरा ही कर्मों के मल को धोती॥
है शुद्ध निर्जरा के स्वामी सुमुनि हमारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥९॥

ॐ ह्रीं श्री निर्जराभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

छह द्रव्य से पूरित है यह तीन लोक सारा।
चारों ही गति के दुख से दुखिया है जगत सारा॥
जो जग स्वरूप समझे वह आत्मा संवारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री लोकभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

वस्तुस्वरूप समझो निज बोधि प्राप्त कर लो।
त्रय लोक में जो दुर्लभ वह पाके कष्ट हर लो॥
जो हैं यथार्थ ज्ञानी भवभोग से वे हारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥११॥

ॐ ह्रीं श्री बोधिदुर्लभभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जो धर्म धारते हैं रत्नत्रयी हृदय में।
वे आत्मधर्म पाकर जाते हैं शिव निलय में॥
निज आत्म धर्म आश्रय लेते हैं सुमुनि सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

माता पिता सुतादिक नारी व भ्रात है पर।
गज अश्व आदि चेतन सारे के सारे नश्वर॥
संग इनका त्याग दो तो पाओगे सुक्ख सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री चेतनरूपबाह्यपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

सोना व रत्न चांदी बहु ग्राम अचेतन गृह।
निर्जीव राग छोड़ो हो जाओ इनसे निस्पृह॥
बहिरंग परिग्रह तज आनंद पाओ सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचेतनरूपबाह्यपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

ये राग-द्वेष आदिक अंतर में जो होते हैं।
चारों ही गति के क्लेशों का बीज ये बोते हैं॥
परिग्रह ये अंतरंगी त्यागो सदा को सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अंतरंगपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

निर्ग्रंथ दिगंबर मुनि बनना तुम्हें पड़ेगा।
निज आत्मा के भीतर अड़ना तुम्हें पड़ेगा॥
हो जाओगे अकिंचन परभाव त्याग सारे।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विविधपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(छंद-दिग्पाल)

पाया है हमने अब तो संसार का किनारा।
सम्यक्त्व को पाकर के निज ज्ञान उर में धारा॥
चारित्र धारते ही संयम भी उर में आया।
रत्नत्रय हमने पाया जो है सदा हमारा॥
ध्यानाग्नि प्रज्वलित कर कर्मों को जलाया है।
निर्भार हो गए हम पाया है सुख अपारा॥
निर्ग्रंथ सुमुनि बनकर शुद्धोपयोग भाया।
अतएव स्व-तरणी को भवपार अब उतारा॥
अनुभव स्वरस को पीकर निजध्यान लगाया था।
निज भक्ति से मिला है शुद्धात्मा हमारा॥
ध्रुवधाम के सदा को हम बन गए हैं स्वामी।
जड़ देह से पृथक् हो निज आत्मा संवारा॥
अपरिग्रही आकिंचन जब हृदय में आता है।
गुंजायमान होता है तब आत्मा हमारा।
गुणगान आकिंचन का मुनिराज ही करते हैं।
कब प्राप्त हो आकिंचन अब यही उर में धारा॥

(दोहा)

आकिंचन निज धर्म की महिमा अपरंपार।
जो भी इसको धारते पाते हैं भवपार॥

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ आकिंचन गुणधाम।
अपरिग्रह धारण करूँ पाऊँ निजध्रुवधाम॥

इत्याशीर्वाद:

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्गाय नमः।

पूजन क्रमांक ११

श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-अर्ध कुण्डलिया)

ब्रह्मचर्य निजधर्म ही उत्तम सुखदातार।
लाख चौरासी शील के उत्तर गुण शिवकार॥
उत्तर गुण शिवकार परम सुख के दाता हैं।
परम शांति के सिंधु विभावों के घाता हैं॥
जो नव कोटि पूर्वक धरता ब्रह्मचर्य व्रत।
वह प्राणी सदैव को पाता है सुख शाश्वत॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छंद-अवतार-चौबीसों श्री जिनचंद)

जल शील भाव का लाय, त्रिविध रोग हर लूँ।
पाऊँ निज आत्मस्वरूप, निजपद आदर लूँ॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

शीतल चंदन की गंध, भवज्वर नाशक है।
निज आत्मस्वरूप अनूप, विभ्रम नाशक है॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि.।

निज गुण अक्षत ही श्रेष्ठ मुझको भाए हैं।
अक्षयपद पाने के भाव उर आये हैं॥

पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

समभावी पुष्प महान हृदय सुहाए हैं।
कामाग्नि बुझाने के यत्न ही भाये हैं॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

अनुभव रसमय नैवेद्य हे प्रभु लाऊँगा।
पद निराहार सुखरूप मैं भी पाऊँगा॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

निज ज्ञानदीप की ज्योति उर को भायी है।
कैवल्यज्ञान की रीत मुझे सुहायी है॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

निज ज्ञान धूप की गंध उर को भायी है।
वसुकर्म नाश की शक्ति मैंने पायी है॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।

निज शुद्ध भावफल हे प्रभु पाऊँगा।
फल मोक्ष प्राप्त कर नाथ शिवपुर जाऊँगा॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

निज गुणमय अर्घ्य अपूर्व शुद्ध बनाऊँगा।
पदवी अनर्घ्य के हेतु निज को ध्याऊँगा॥
पूजूँ उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सदा स्वामी।
पाऊँ चौरासी लाख उत्तर गुण नामी॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

(छंद-रोला)

जहाँ वास हो महिलाओं का वहाँ न रहना।
अपने शील स्वभाव भाव रस में ही बहना॥
सभी नारियों को माता के समान मानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो॥१॥

ॐ ह्रीं श्री स्त्रीसहवासवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

नारी तन की ओर न रति से देखो चेतन।
उनका हाव भाव विभ्रम मत पेखो चेतन॥
शील धर्म पालन से ही सुख होता मानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो॥२॥

ॐ ह्रीं श्री स्त्रीमनोहरांगनिरीक्षणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

राग वचन मत कभी किसी से बोलो चेतन।
जिनवाणी वच तौल-तौल कर बोलो चेतन॥
राग वचन सुन पाप नहीं उर में उपजानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो॥३॥

ॐ ह्रीं श्री रागवचनवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

पूर्व भोग जो भोगे उनका करो न चिंतन।
परम शील भावों को धारो मन में चेतन॥
राग भाव पूरा त्यागो निज रस को जानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो॥४॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वभोगानुस्मरणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कामोद्दीपक भोजन थोड़ा भी मत खाना।
षट्रस व्यंजन देख रंच भी मत ललचाना॥

पूर्ण शील भावना सदा ही हृदय सजानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री वृष्येष्टरसवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

तन शृंगार न तेल फुलेल आदि से करना।
रुचिकर भूषण आभूषण मत तन पर धरना॥
शील आचरण से भूषित हो निज को जानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री स्वशरीरशृंगारवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

महिलाओं की शैय्या पर तुम नहीं पोढ़ना।
महिलाओं के वस्त्रों को भी नहीं ओढ़ना॥
महा शीलव्रत दृढ़ता से पालन हो ठानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री स्त्रीशय्यासनवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कामकथा में कभी भूल मन को लगाना।
विकथाओं को कभी न सुनना तथा सुनाना॥
काम मदन कंदर्प न पलभर मन में आनो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री कामकथावर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

उदर पूर्ण भोजन तज ऊनोदर ही करना।
उत्तम पूर्ण शीलव्रत पालन में चित धरना॥
इससे शील तुम्हारा दृढ़ होगा यह जानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री उदरपूर्णाशनवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जो नव कोटिपूर्वक शील सुपालन करते।
अपने भी दुख हरते पर के भी दुख हरते॥
महा शील गुण धारण कर भव कष्ट मिटानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में आनो ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नवधाशीलपालनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

क्रूर काम वश बड़े बड़े प्राणी हो जाते।
क्रूर काम ज्वर से पीड़ित हो बहु दुख पाते॥
शोषण कामबाण से होना कभी न प्राणी।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म उर धरते ज्ञानी॥११॥

ॐ ह्रीं श्री शोषणकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कामबाण जिसके मन होता बहु दुख पाता।
मन संताप ताप होता व्याकुलता पाता॥
कामबाण संताप न हो गुण शील जगाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री संतापकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कामबाण उच्चाटन हो तो होता दुखिया।
उच्चाटन शर काम न हो तो बनता सुखिया॥
कामबाण उच्चाटन निज उर में मत लाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री उच्चाटनकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

काम व्याधिवश कामी जन को कुछ न सुहाता।
वशीकरण शर काम न हो तो वह सुख पाता॥
कामबाण के वशीकरण से तुम बच जाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री वशीकरणकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कामदेव से मूर्छित प्राणी सुध-बुध खोते।
शीलवंत ही कामदेव के बल को धोते॥
मोहन कामबाण से बचकर निज को ध्याना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मोहनकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

मोह शत्रु को जयकर काम शत्रु को जीतो।
कामबाण की सकल व्याधियों से अब रीतो॥
पंच प्रकारी कामबाण क्षय कर सुख पाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री पंचप्रकारकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

रूप त्रिया का लखकर जो हर्षित होता है।
वृथा पाप का बोझ शीश अपने ढोता है॥
नहीं कामशर जिनके मन होता सुख जानो।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही उर में मानो॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री मुलकनकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

बार-बार नारी को जो देखना चाहता।
अवलोकन कर स्वयं आग में अरे दाहता॥
अपने उर में ऐसा शूल नहीं तुम लाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री अवलोकनकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

हास्यवचन कह जो नारी को मूढ़ रिझाते।
वह न चाहती पर ये उर संतोष न लाते॥
यही काम शर कभी नहीं तुम उर में लाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री हास्यकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

प्रगट वचन नारी से जब यह कह नहीं पाता।
किन्तु इशारे कर नारी का जिय ललचाता॥
इंगित चेष्टा वर्जनीय मत मन में लाना।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ही हृदय सजाना॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री इंगितचेष्टावर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

कामव्याधि से स्त्री के बिन प्राण गंवाता।
माता सुता बहिन पत्नी पहिचान न पाता॥
कामभाव जो जय करता है कष्ट न पाता।
उत्तम ब्रह्मचर्य धारण कर बहु सुख पाता॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री मारणकामबाणवर्जनोत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

शील बाढ़ की ही विधि से जो रक्षा करते।
दश प्रकार से कामबाण को पल में हरते॥
मुक्ति वधु से परिणय करके वे हर्षाते।
उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म से शिवसुख पाते॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री शुद्धब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

ढाई अक्षर आत्मा दो अक्षर का ज्ञान।
जो यह सम्यक् जानता पाता पद निर्वाण॥
आत्मब्रह्म ही ब्रह्म है परमभाव से युक्त।
ब्रह्मचर्य उर धार कर प्राणी होते मुक्त॥

(छंद-दिग्वधु)

किस मार्ग में जाते हो इसका निर्णय कर लो।
शिवपथ है या भवपथ इसका निश्चय कर लो॥
मत नयन बंद करना जाग्रत होकर जाना।
पहिले समकित लेकर मिथ्यात्व विजय कर लो॥
समकित बिन तप संयम कुछ काम न आएगा।
तप संयम लेना है तो समकित उर धर लो॥
फिर भवपथ को तज कर शिवपथ पर आ जाना।
चौकड़ी कषायों की तीनों ही जय कर लो॥
निज धर्मध्यान ध्याना रागादि भाव हरना।
दृढ़ शुक्लध्यान लेकर मोहादिक क्षय कर लो॥
श्रेणी पर चढ़ते ही दृढ़ यथाख्यात ले लो।
घातिया कर्म चारों सम्पूर्ण विजय कर लो॥
कैवल्यज्ञान लेना जो स्व-पर प्रकाशक है।
सर्वज्ञ स्वपद लेकर आत्मत्व प्रगट कर लो॥
फिर योग नाश करना क्षय अघातिया करना।
सिद्धत्व स्वगुण पाकर संसार सर्व हर लो॥
ब्रह्मचर्य का स्रोत शुद्धातम के पास है।
शिवसुख ओत-प्रोत ब्रह्मचर्य निज धर्म है॥

ॐ ह्रीं श्री शुद्धब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय जयमाला अर्घ्यं नि.।

पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ ब्रह्मचर्य का स्रोत।
ब्रह्मचर्य निज धर्म ही शिवसुख ओत-प्रोत॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय नमः।

अन्तिम महाअर्घ्य

(छंद-विधाता)

शुद्ध सम्यक्त्व पाने का ये मौसम आज आया है।
मोह मिथ्यात्व भ्रम क्षय का सुअवसर आज पाया है॥
अगर पुरुषार्थ कर लोगे तो समकित शीघ्र पाओगे।
स्वरूपाचरण भी पाकर मुक्ति के पथ में जाओगे॥
धर्म दश मोक्ष सुख दाता इन्हें धारण करो चेतन।
बिना दशधर्म के जग में सदा ही दुख उठाओगे॥
शीघ्र अविरति विनाशो तुम शुद्ध अणुव्रत अभी धारो।
प्रमादों को करोगे क्षय तो संयम पूर्ण पाओगे॥
चौकड़ी तीन क्षय कीनी तो होगी संज्वलन भी क्षय।
धर्मध्यानी बनोगे तुम निजातम को ही ध्याओगे॥
बढ़ा रत्नत्रयी रथ को शुक्लध्यानी बनोगे फिर।
चढ़ोगे श्रेणी पर तत्क्षण दशा अविकल्प पाओगे॥
यथाख्याती बनोगे फिर घातिया कर्म नाशोगे।
दशा अरहंत पाकर के तुम योगी पद सहज लोगे॥
योग भी नाश करके तुम अयोगी पद सहज लोगे।
मुक्ति मंदिर जाकर के सिद्धपद अपना पाओगे॥
यही दशधर्म की महिमा यही दशधर्म का फल है।
अनंतानंत कालों तक शाश्वत सुख ही पाओगे॥

(दोहा)

महाअर्घ्य अपर्ण करूँ श्री दशधर्म महान।
दशधर्मों की भक्ति से पाऊँ पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्मेभ्यो अंतिम महाअर्घ्यं नि.।

अंतिम महाजयमाला

(वीरछंद)

बहिरात्मा है राग-द्वेष से ओत-प्रोत रागों का दास।
अन्तरात्मा राग-द्वेष से भिन्न किन्तु रागों के पास॥
परमात्मा है राग-द्वेष के भावों से विरहित शिवरूप।
इन तीनों का लक्षण जानो फिर निरखो निज आत्मस्वरूप॥
अकषायी स्वभाव चेतन का वीतराग है शुद्ध स्वरूप।
सबके भीतर वीतराग परमात्मा है सर्वज्ञ स्वरूप॥
भाव-द्रव्य-नोकर्म त्याग दे हो जाएगा तू निर्भार।
मात्र एक अन्तर्मुहूर्त में जाएगा तू भव के पार॥
ज्ञानस्वरूप जाननेवाला आत्मा ही होता अविकार।
आत्मज्ञान होते ही करता राग-द्वेष पूर्ण परिहार॥
ऐसा अन्तरात्मा अपने परमात्मा का लेकर पक्ष।
शुद्ध भाव के द्वारा करता है अपना परिचय प्रत्यक्ष॥
ऐसी द्रव्य दृष्टि जिसकी हो वह पाता हे केवलज्ञान।
झट संसार भाव को हर कर पा लेता है पद निर्वाण॥
थोडा-सा ही श्रम करने पर हो जाता है परमात्म।
फिर न कभी भी हो सकता है पल भर को भी बहिरात्म॥
उत्तम क्षमादि दश धर्मों के सोपानों पर जो चढ़ता।
वही जीव आतमत्व शक्ति से शिवपथ पर आगे बढ़ता॥
धर्ममार्ग तो सम्यक् दर्शन से ही होता है प्रारंभ।
रत्नत्रय की तरणी मिलती बन जाता है धर्मस्तंभ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्मेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

निश्चय ब्रह्मचर्य की महिमा ऋषि मुनि गणधर ने गायी।
निजस्वरूप के दर्शन पाए आत्मब्रह्म महिमा आयी॥
निश्चय धर्म आत्मा ही है परंब्रह्म शिवसुखदायी।
पूजन करते ही प्रभु मैंने परम शान्ति अनुपम पायी॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणधर्मेभ्यो नमः।

समुच्चय जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा-मार्दव-आर्जव-सत्य-शौच-संयम-तप त्याग-आकिंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय नमः।

समुच्चय महाअर्घ्य

(छंद-ताटंक)

निज भावों का महाअर्घ्य ले पाँचों परमेष्ठी ध्याऊँ।
जिनवाणी जिनधर्म शरण पा देव शास्त्र गुरु उर लाऊँ॥
तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम अकृत्रिम गृह ध्याऊँ।
सर्व सिद्धप्रभु पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर गुण गाऊँ॥
सोलहकारण रत्नत्रय दशलक्षण नव सुदेव पाऊँ।
चौबीसों जिन भूत भविष्यत वर्तमान जिनवर ध्याऊँ॥
तीन लोक के सर्व बिम्ब जिन वन्दूँ जिनवर गुण गाऊँ।
अविनाशी अनर्घ्य पद पाऊँ शुद्ध आत्मगुण प्रगटाऊँ॥

(दोहा)

महाअर्घ्य अर्पण करूँ पूर्ण विनय से देव।
आप कृपा से प्राप्त हो परमशान्ति स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं श्री समस्त-जिनधर्म-पूज्यपदेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति पाठ

(दोहा)

परम शान्ति पाऊँ प्रभो, पाऊँ सम्यक् धर्म।
रत्नत्रय की भक्ति से, नाशूँ सारे कर्म॥
सकल जगत में शान्ति हो, सुखी रहें सब जीव।
षट्कायक के जीव सब, दुखी न होय कदीव॥
जीव मात्र पर क्षमा रख, पालूँ अपना धर्म।
शुद्धात्मा का ध्यान धर, पाऊँ निश्चय धर्म॥
यही भावना है प्रभो, घर-घर मंगल चार।
पूर्ण शान्ति हो विश्व में, हो सबका उद्धार॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(पंचपरमेष्ठी का स्मरण करते हुए नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

क्षमापना

मैं लौटकर निगोद कभी जाऊँगा नहीं।
सम्यक्त्व धन जो पाया है गंवाऊँगा नहीं॥
मेहनत से मैंने भेदज्ञान पा ही लिया है।
मिथ्यात्व मोहभाव कभी लाऊँगा नहीं॥
स्वर्गों के सुख का मार्ग तो पाया अनंत वार।
स्वर्गों की क्षणिक साता में लुभाऊँगा नहीं॥
संसार मार्ग छोड़ मोक्षमार्ग पाया है।
निज मोक्षमार्ग तज के कहीं जाऊँगा नहीं॥
गाए हैं मैंने गीत सदा ही विभाव के।
अब से विभाव गीत कभी गाऊँगा नहीं॥
मंगलमय भगवान वीर प्रभु मंगलमय गौतम गणधर।
मंगलमय श्री कुन्दकुन्द ऋषि मंगल जैनधर्म सुखकर॥
सर्व मंगलों में मंगल है श्रेष्ठ सर्व कल्याणमयी।
श्री जिनधर्म प्रधान जगत में जिन शासन हो सर्व जयी॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

भजन

धर्म दशलक्षण धारो जी।
यही मोक्ष सोपान इन्हीं पर तन-मन वारो जी।
धर्म दशलक्षण धारो जी ॥टेक॥

उत्तम क्षमा क्रोध का घाता,
उत्तम मार्दव विनय प्रदाता,
उत्तम आर्जव धर्म धार ऋजुता सिंगारो जी।
धर्म दशलक्षण धारो जी ॥१॥

उत्तम सत्य धर्म सुखकारी,
उत्तम शौच लोभ परिहारी,
उत्तम संयम धर्म हृदय ले मुनिपद धारो जी।
धर्म दशलक्षण धारो जी ॥२॥

उत्तम तप निर्जरा कर्म की,
जय जय उत्तम त्याग धर्म की,
उत्तम आकिंचन से निज का रूप संवारो जी।
धर्म दशलक्षण धारो जी ॥३॥

उत्तम ब्रह्मचर्य विख्याता,
महाशील गुण उर में लाता,
ये दशधर्म कर्म वसु हर्ता सदा विचारो जी।
धर्म दशलक्षण धारो जी ॥४॥

ये दशलक्षण धर्म सुपावन,
भव्यों को हैं बहु मन-भावन,
इनका पालन कर निज को भवपार उतारो जी।
धर्म दशलक्षण धारो ही ॥५॥

पूजन क्रमांक १२

श्री क्षमावाणी पूजन

स्थापना

(छंद-ताटंक)

क्षमावाणी का पर्व सुपावन देता जीवों को संदेश।
उत्तम क्षमाधर्म को धारो जो अतिभव्य जीव का वेश ।।
मोह नींद से जागो चेतन अब त्यागो मिथ्याभिनिवेश।
द्रव्यदृष्टि बन निजस्वभाव से चलो शीघ्र सिद्धों के देश ।।
क्षमा, मार्दव, आर्जव, संयम, शौच, सत्य को अपनाओ।
त्याग, तपस्या, आकिंचन, व्रत ब्रह्मचर्यमय हो जाओ ।।
एक धर्म का सार यही है समतामय ही बन जाओ।
सब जीवों पर क्षमाभाव रख स्वयं क्षमामय हो जाओ ।।
क्षमा धर्म की महिमा अनुपम क्षमा धर्म ही जग में सार।
तीन लोक में गूँज रही है क्षमावाणी की जयजयकार ।।
ज्ञाता-दृष्टा हो समग्र को देखो उत्तम निर्मल भेष।
रागों से विरक्त हो जाओ रहे न दुख का किंचित् लेश ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमा धर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जीवादिक नव तत्त्वों का श्रद्धान यही सम्यक्त्व प्रथम।
इनका ज्ञान ज्ञान है, रागादिक का त्याग चरित्र परम ॥
'संते पुव्वणिबद्धं जाणदि'[1] वह अबंध का ज्ञाता है।
सम्यक्दृष्टि सुजीव आस्रव-बंधरहित हो जाता है ॥
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म-मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निजस्वभाव को पहचानूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

---

१. (सम्यक्दृष्टि) जीव सत्ता में मौजूद पूर्वबद्ध कर्मों को जानता है।

सप्त भयों से रहित निशंकित निजस्वभाव में सम्यग्दृष्टि।
मिथ्यात्वादिक भावों में जो रहता वह है मिथ्यादृष्टि।।
तीन मूढ़ता छह अनायतन तीन शल्य का नाम नहीं।
आठ दोष समकित के अरु आठों मद का कुछ काम नहीं।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म जाना कुशील शुभ को सुशील है मानत रे।
जो संसार बंध का कारण वह कुशील न जानत रे।।
कर्म फलों के प्रति जिनकी आकांक्षा उर में रही नहीं।
वह निकांक्षित सम्यग्दृष्टी भव की वांछा रही नहीं।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

राग शुभाशुभ दोनों ही संसार भ्रमण का कारण है।
शुद्धभाव ही एकमात्र परमार्थ भवोदधि तारण है।।
वस्तु स्वभाव धर्म के प्रति जो लेश जुगुप्सा करे नहीं।
निर्विचिकित्सक जीव वही है निश्चय सम्यग्दृष्टि वही।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध आत्मा जो ध्याता वह पूर्ण शुद्धता पाता है।
जो अशुद्ध को ध्याता है वह ही अशुद्धता पाता है।।
परभावों में जो न मूढ़ है दृष्टि यथार्थ सदा जिसकी।
वह अमूढ़दृष्टि का धारी सम्यग्दृष्टि सदा उसकी।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-द्वेष मोहादिक आस्रव ज्ञानी को होते न कभी।
ज्ञाता-दृष्टा को ही होते उत्तम संवर भाव सभी।।
शुद्धातम की भक्ति सहित जो परभावों से नहीं जुड़ा।
उपगूहन का अधिकारी है सम्यग्दृष्टि महान बड़ा।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म बन्ध के चारों कारण मिथ्या अविरति योग कषाय।
चेतयिता इनका छेदन कर, करता है निर्वाण उपाय।।
जो उन्मार्ग छोड़कर निज को निज में सुस्थापित करता।
स्थितिकरण युक्त होता वह सम्यग्दृष्टी स्वहित करता।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्य-पापमय सभी शुभाशुभ योगों से रहता वह दूर।
सर्व संग से रहित हुआ वह दर्शन-ज्ञानमयी सुख पूर।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरितधारी के प्रति गौ वत्सलभाव।
वात्सल्य का धारी सम्यग्दृष्टि मिटाता पूर्ण विभाव।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानविहीन कभी भी पलभर ज्ञानस्वरूप नहीं होता।
बिना ज्ञान के ग्रहण किए कर्मों से मुक्त नहीं होता।।
विद्यारूपी रथ पर चढ़ जो ज्ञानरूप रथ चलवाता।
वह जिन-शासन की प्रभावना करता शिवपथ दर्शाता।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वरूप को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

उत्तम क्षमा स्वधर्म को, वन्दन करूँ त्रिकाल।
नाश दोष पच्चीस कर, काटूँ भव जंजाल।।

(ताटंक)

सोलहकारण पुष्पांजलि दशलक्षण रत्नत्रय व्रत पूर्ण।
इनके सम्यक् पालन से हो जाते हैं वसुकर्म विचूर्ण।।
भाद्र मास में सोलहकारण तीस दिवस तक होते हैं।
शुक्ल पक्ष में दशलक्षण पंचम से दस दिन होते हैं।।
पुष्पांजलि दिन पाँच पंचमी से नवमी तक होते हैं।
पावन रत्नत्रयव्रत अन्तिम तीन दिवस के होते हैं।।
आश्विन कृष्णा एकम् उत्सव क्षमावाणि का होता है।
उत्तमक्षमा धार उर श्रावक मोक्षमार्ग को जोता है।।
भाद्र मास अरु माघ मास अरु चैत्र मास में आते हैं।
तीन बार आ पर्वराज जिनवर संदेश सुनाते हैं।।
'जीवे कम्मं बद्धं पुट्ठं'[1] यह तो है व्यवहार कथन।
है अबद्ध अस्पृष्ट कर्म से निश्चय नय का यही कथन।।
जीव-देह को एक बताना यह है नय व्यवहार अरे।
जीव देह तो पृथक्-पृथक् हैं निश्चय नय कह रहा अरे।।
निश्चय नय का विषय छोड़ व्यवहार माँहि करते वर्तन।
उनको मोक्ष नहीं हो सकता और न ही सम्यग्दर्शन।।
'दोण्हविणयाण भणियं जाणई'[2] जो पक्षातिक्रांत होता।
चित्स्वरूप का अनुभव करता सकलकर्म मल को खोता।।
ज्ञानी ज्ञानस्वरूप छोड़कर जब अज्ञान रूप होता।
तब अज्ञानी कहलाता है पुद्गल बन्ध रूप होता।।

१. जीव कर्मों को बाँधता है तथा स्पर्शित करता है।(समयसार, गाथा-१४१)
२. दोनों ही नयों के कथन को मात्र जानता है। (समयसार, गाथा-१४३)

'जह विस भुव भुज्जंतो वेज्जो'[1] मरण नहीं पा सकता है।
ज्ञानी पुद्गल कर्म उदय को भोगे बन्ध न करता है।।
मुनि अथवा गृहस्थ कोई भी मोक्षमार्ग है कभी नहीं।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित ही मोक्षमार्ग है सही-सही।।
मुनि अथवा गृहस्थ के लिंगों में जो ममता करता है।
मोक्षमार्ग तो बहुत दूर भव-अटवी में ही भ्रमता है।।
प्रतिक्रमण प्रतिसरण आदि आठों प्रकार के हैं विषकुम्भ।
इनसे जो विपरीत वही हैं मोक्षमार्ग के अमृतकुम्भ।।
पुण्यभाव की भी तो इच्छा ज्ञानी कभी नहीं करता।
परभावों से अरति सदा है निज का ही कर्ता धर्ता।।
कोई कर्म किसी को भी सुख-दुख देने में नहीं समर्थ।
जीव स्वयं ही अपने सुख-दुख का निर्माता स्वयं समर्थ।।
क्रोध, मान, माया, लोभादिक नहीं जीव के किंचित् मात्र।
रूप, गंध, रस, स्पर्श शब्द भी नहीं जीव के किंचित् मात्र।।
देह संहनन संस्थान भी नहीं जीव के किंचित् मात्र।
राग-द्वेष-मोहादि भाव भी नहीं जीव के किंचित् मात्र।।
सर्वभाव से भिन्न त्रिकाली पूर्ण ज्ञानमय ज्ञायक मात्र।
नित्य, ध्रौव्य, चिद्रूप, निरंजन, दर्शनज्ञानमयी चिन्मात्र।।
वाक्जाल में जो उलझे वह कभी सुलझ ना पायेंगे।
निज अनुभव रसपान किये बिन नहीं मोक्ष वे पायेंगे।।
अनुभव ही तो शिवसमुद्र है अनुभव शाश्वतसुख का स्रोत।
अनुभव परमसत्य शिव सुन्दर अनुभव शिव से ओतप्रोत।।
निज स्वभाव के सन्मुख हो जा, पर से दृष्टि हटा नादान।
पूर्ण सिद्धपर्याय प्रकट कर आज अभी पा ले निर्वाण।।
ज्ञान-चेतना सिंधु स्वयं तू स्वयं अनन्तगुणों का भूप।
त्रिभुवनपति सर्वज्ञ ज्योतिमय चिंतामणि चेतन चिद्रूप।।
यह उपदेश श्रवण कर हे प्रभु ! मैत्री भाव हृदय धारूँ।

१. जिसप्रकार वैद्यपुरुष विष को भोगता हुआ भी (समयसार, गाथा-१९५)

जो विपरीत वृत्तिवाले हैं उन पर मैं समता धारूँ।।
धीरे-धीरे पुण्य-पाप शुभ-अशुभ आस्रव संहारूँ।
भव-तन भोगों से विरक्त हो निजस्वभाव को स्वीकारूँ।।
दशधर्मों को पढ़ सुनकर अन्तर में आये परिवर्तन।
व्रत उपवास तपादिक द्वारा करूँ सदा ही निज चिंतन।।
राग-द्वेष अभिमान पाप हर काम क्रोध को चूर करूँ।
जो संकल्प-विकल्प उठे प्रभु उनको क्षण-क्षण दूर करूँ।।
अणुभर भी यदि राग रहेगा नहीं मोक्ष पद पाऊँगा।
तीन लोक में काल अनंता राग लिए भरमाऊँगा।।
राग शुभाशुभ के विनाश से वीतराग बन जाऊँगा।
शुद्धात्मानुभूति के द्वारा स्वयं सिद्ध पद पाऊँगा।।
पर्यूषण में दूषण त्यागूँ बाह्य क्रिया में रमे न मन।
शिवपथ का अनुसरण करूँ मैं बन के नाथ सिद्धनन्दन।।
जीव मात्र पर क्षमाभाव रख मैं व्यवहार धर्म पालूँ।
निज शुद्धातम पर करुणा कर निश्चय धर्म सहज पालूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय जयमाला अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष-मार्ग दर्शा रहा, क्षमावाणी का पर्व।
क्षमाभाव धारण करो, राग-द्वेष हर सर्व।।

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय नमः।

गीत

आनन्द सिन्धु अपनी निज आत्मा है।
निज आत्मा ही शुद्धात्मा है॥
शिव सौख्य साधक बहिरात्मा है।
शिव सौख्य साधक अन्तरात्मा है॥
मेरा सुचेतन परमात्मा है।
मेरी सदा से सिद्धात्मा है॥